दण्डी बामदेवानंद भिक्षु

36

श्रीः।

विनयपत्रिका।

गो० स्वामीतुलसीदासकृत



जिसको

अत्यन्त [illegible] शुद्ध प्राचीन हस्तलिखित प्रतिसे विशेष शुद्धतापूर्वक ज्ञानपूरनिवासी पण्डित महावीर प्रसाद मालवीय वैद्य 'वीरकवि' ने उल्लेख किया है।

उसीको

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास

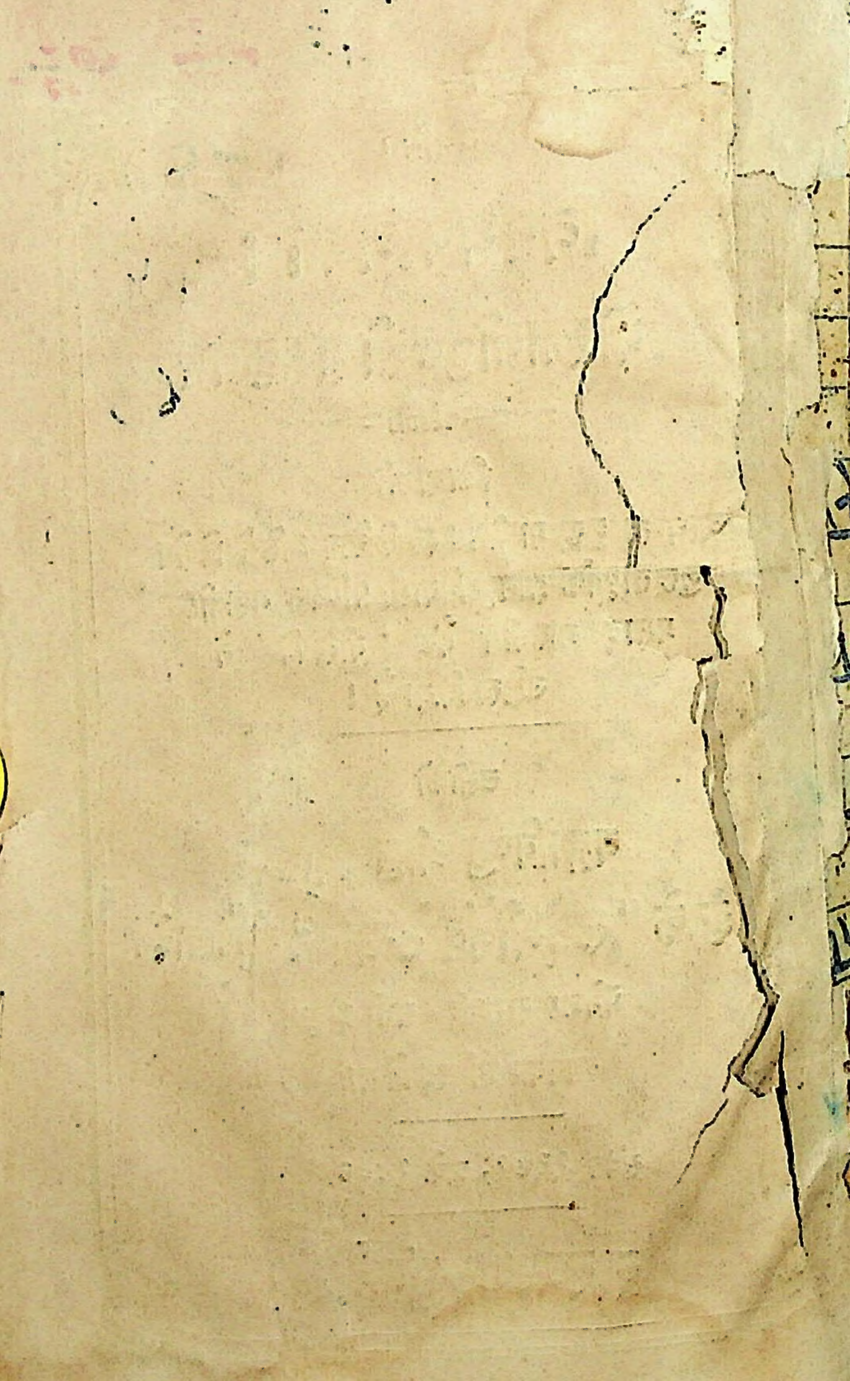
इनके "लक्ष्मीवेंकटेश्वर" छापेखानेमें

मॅनेजर रामचंद्र राघो इन्होंने

छापकर प्रसिद्ध किया.

संवत् १९७१, शके १८३६.

कल्याण-मुंबई.





भूमिका.

परमपूज्य प्रातःस्मरणीय महात्मा गोस्वामी तुलसीदासजीके बनाये ग्रन्थोंमें विनयपत्रिका ऐसी पुस्तक है जिसमें वेदान्तके गूढ़ रहस्य कूटकूटकर भरे हैं। कहनेके लिये यह भाषा है परन्तु कहीं २ विषय इतने गम्भीर हैं कि उनके समझनेमें बड़ेबड़े वेदान्तियोंकी बुद्धि चकरा जाती है।

विनयपत्रिकामें गुसाईंजीने भक्ति, ज्ञान, वैराग्य और दीनताका वर्णन ऐसी सरसताके साथ किया है जिसके सुनने तथा समझनेसे पत्थरके समान कठोर हृदयभी पिघलकर मुलायम बन जाता है। प्रीतिपूर्वक मनन करनेसे मनुष्य महाभागवत हो जाता है, इसमें अणुमात्रभी सन्देह नहीं है।

अबतक पाठान्तरके कारण यह नहीं स्थिर हो सकता था कि गोस्वामीजी कृत शुद्धपाठ क्या है। बरसोंकी खोजसे हमें तीन प्रति हस्तलिखित विनयपत्रिका ईश्वर कृपासे प्राप्त हुई। उसमें एक प्रति सम्वत् १८८९ विक्रमाब्दकी लिखी जो मिरजापुरनिवासी विद्वद्वर परमभागवत पं० रामगुलामजी द्विवेदीके हाथकी लिखी प्रतिसे अत्यन्त शुद्धतापूर्वक लिखी है, इसी पुस्तकके आधारपर हमने पाठ रक्खा है।

इस प्रतिका पाठ ठीकठीक गुसांईजीकी रचनाके अनुकूलही है इसमें कुछभी अत्युक्ति अथवा सन्देहकी बात नहीं है।

चैत्रशुक्ल ९ रविवार
सम्वत् १९७१ विक्रमाब्द।

सज्जनोंका कृपाकांक्षी
महावीर प्रसाद मालवीय वैद्य
ज्ञानपूर—बनारसराज्य।

२
१३

श्रीगणेशाय नमः ।

विनयपत्रिकाके पदोंका सूचीपत्र ।



इति सूचीपत्र समाप्त ।

श्रीगणेशाय नमः ।

विनयपत्रिका ।

राग बिलावल ।

गाइय श्रीगणपति जग वन्दन । शङ्कर सुवन भवानी नन्दन ॥ सिद्धि सदन गजवदन विनायक । कृपासिन्धु सुन्दर सबलायक ॥ मोदक प्रिय मुद मङ्गल दाता । विद्यावारिधि बुद्धि विधाता ॥ मांगत तुलसिदास कर जोरे । बसहिं राम सिय मानस मोरे ॥ १ ॥

दीनदयाल दिवाकर देवा । कर मुनि मनुज सुरासुर सेवा ॥ हिम तम करि केहरि करमाली । दहन दोष दुख दुरित रुजाली ॥ कोक कोकनद लोक प्रकासी । तेज प्रताप रूप रस रासी ॥ सारथि पङ्गु दिव्य रथ गामी । हरि शङ्कर विधि मूरति स्वामी ॥ वेद पुराण प्रगट यश जागै । तुलसी राम भक्ति वर मागै ॥ २ ॥

को याँचिये शम्भु तजि आन । दीन दयालु भगत आरतिहर, सबप्रकार समरथ भगवान ॥ कालकूट ज्वर जरत सुरासुर, निज पन लागि कियो विष पान । दारुण दनुज जगत दुखदायक, जारचो त्रिपुर एकही बान ॥ जो गति अगम महा मुनि दुर्लभ, कहत सन्त श्रुति सकल पुरान । सो गति मरणकाल अपने पुर, देत सदा शिव सबहि समान ॥ सेवत सुलभ उदार कल्पतरु, पारबती पति परम सुजान । देहु रामपद नेहु कामरिपु, तुलसिदासकहँ कृपा निधान ॥ ३ ॥

राग धनाश्री ।

दानी कहुँ शङ्करसे नाहीं । दीन दयालु देबोई भावै, याचक सदा सुहाहीं ॥ मारिके मार थप्यो जग जाकी, प्रथमरेख भट माहीं । ता ठाकुरको रीझि निवाजब, कहि न परत मो पाहीं ॥ योग कोटि करि जो गति हरिसों, मुनि मागत सकुचाहीं । वेदाविदित तेहि पद पुरारि पुर, कीट पतङ्ग समाहीं ॥ ईश उदार

उमापति परिहरि, अनत जे याचन जाहीं। तुलसि-दास ते मूढ़ मागने, कबहुँ न पेट अघाहीं ॥ ४ ॥

बावरो रावरो नाह भवानी। दानि बड़ो दिन देत दिये बिनु, वेद बड़ाई भानी ॥ निजघरकी वर-बात बिलोकहु, हौ तुम परम सयानी। शिवकी दई सम्पदा देखत, श्री शारदा सिहानी ॥ जिनके भाल लिखी लिपि मेरी, सुखकी नहीं निशानी। तिन्ह रङ्कनिको नाक सँवारत, हौं आयों नकवानी॥ दुख दीनता दुखी इनके दुख, याचकता अकुलानी। यह अधिकार सौंपिये औरहि, भीख भली मैं जानी ॥ प्रेम प्रशंसा विनय व्यङ्गियुत, सुनि विधिकी वर बानी। तुलसी मुदित महेश मनहिं मन, जगतमातु मुसुकानी ॥ ५ ॥

राग रामकली।

मागिये गिरिजापति कासी। जासुभवन अणि-मादिक दासी ॥ अवढरदानि द्रवत सुठि थोरे। सकत न देखि दीन करजोरे ॥ सुख सम्पति मति

सुगति सुहाई । सकल सुलभ शङ्कर सेवकाई ॥ गये शरण आरतिके लीन्हे । निरखि निहाल निमिष महँ कीन्हे ॥ तुलसिदास याचक यश गावै । विमल भगति रघुपतिकी पावै ॥ ६ ॥

कस न दीन पर द्रवहु उमावर । दारुण विपति हरण करुणाकर ॥ वेद पुराण कहत उदार हर । हमरि बेर कस भयेहु कृपिणतर ॥ कवन भगति कीन्ही गुणनिधि द्विज । है प्रसन्न दीन्ह्यों शिव पद-निज ॥ जोगति अगम महामुनि गावहिं । तवपुर कीट पतङ्गहु पावहिं ॥ देहु कामरिपु राम चरण-रति । तुलसिदासप्रभु हरहु भेद मति ॥ ७ ॥

देव बड़े दाता बडे शङ्कर बड़े भोरे । किये दूर दुख सबनिके जिन जिन करजोरे ॥ सेवा सुमिरण पूजिबो, पात आखत थोरे । दियो जगत जहँलगि सबै, सुख गज रथ घोरे ॥ गाउँ बसत वामदेव मैं कबहुँ न निहोरे । अधिभौतिक बाधा भई ते किङ्कर तोरे ॥ वेगि बोलि बलि बरजिये करतूति कठोरे । तुलसीदल रूँध्यो चहै सठ साखि सिहोरे ॥ ८ ॥

शिव शिव ह्वै प्रसन्न करु दाया। करुणामय उदार कीरति बलि,-जाउँ हरहु निज माया॥ जलज नयन गुणअयन मयनरिपु, महिमा जान न कोई। बिनुतव कृपा रामपद पङ्कज, सपनेहुँ भगति न होई॥ ऋषय सिद्ध मुनि मनुज दनुज सुर, अपर जीव जगमाहीं। तव पद विमुख पार नहिं पावत, कल्प कोटि चलि जाहीं॥ अहिभूषण दूषणरिपु सेवक, देवदेव त्रिपुरारी। मोह निहार दिवाकर शंकर, शरण शोक भय हारी॥ गिरिजा मनमानस मराल, काशीश मसान निवासी। तुलसिदास हरिचरण कमल वर, देहु भगति अविनासी॥ ९॥

राग धनाश्री।

मोहतम तरणि हर रुद्र शंकर शरण, हरण मम-शोक लोकाभिरामं। बालशशि भाल सुविशाल लोचनकमल, कामशतकोटि लावण्य धामं॥ कम्बु कुन्देन्दु कर्पूर विग्रह रुचिर, तरुण रवि कोटि तनुतेज भ्राजे। भस्म सर्वाङ्ग अर्द्धाङ्ग शैलात्मजा,

व्याल नृकपाल माला बिराजै ॥ मौलि सङ्कुल जटा-
मुकुट विद्युच्छटा, तटिनि बरवारि हरिचरण पूतं।
श्रवण कुण्डल गरल कण्ठ करुणाकन्द, सच्चिदा-
नन्द वन्देवधूतं ॥ शूल शायक पिनाकासि कर शत्रु
वन, दहनइव धूमध्वज वृषभयानं। व्याघ्र गज चर्म
परिधान विज्ञानघन, सिद्ध सुर मुनि मनुज सेव्य-
मानं ॥ ताण्डवित नृत्य पर डमरु डिम डिम प्रवर,
अशुभ इव भाति कल्याणराशी। महाकल्पान्त
ब्रह्माण्ड मण्डल दवन, भवनकैवल्य आसीन
काशी ॥ तज्ञ सर्वज्ञ यज्ञेश अच्युत विभव, विश्व
भवदंश सम्भव पुरारी। इन्द्र चन्द्रार्क वरुणाग्नि
वसु मरुत यम, अर्चि भवदाङ्घ्रि सर्वाधिकारी ॥
अकल निरुपाधि निर्गुण निरञ्जन ब्रह्म, कर्मपथ मेक
मज निर्विकारं। अखिल विग्रह उग्ररूप शिवभूपसुर,
सर्वगत सर्व सर्वोपकारं ॥ ज्ञान वैराग्य धन धर्म
कैवल्य सुख, सुभग सौभाग्य शिव सानुकूलं।
तदपि नरमूढ़ आरूढ़ संसारपथ, भ्रमत भव विमुख
तव पादमूलं ॥ नष्टमति दुष्टअति कष्टरत खेदगत,

दासतुलसी शम्भु शरण आया । देहि कामारि श्रीरामपद पंकरुह, भक्ति अनपायनी गत भेद माया ॥ १० ॥

भीषणाकार भैरव भयंकर भूत, प्रेत प्रमथाधिपति विपति हर्ता । मोहमूषक मार्जार संसार भयहरण, तारण तरण अभय कर्ता ॥ अतुलबल विपुल विस्तार विग्रह गौर, अमल अतिधवल धरणीधराभं । शिरसि संकुलित कल कूट पिङ्गल जटा, पटल शतकोटि विद्युच्छटाभं ॥ भ्राज विबुधापगा आप पावन परम, मौलि मालेव शोभा विचित्रं । ललित लल्लाट पर लसत रजनीश कल, कलाधर नौमिहर धनदमित्रं ॥ इन्दु पावक भानु नयन मर्दन मयन, ज्ञान गुण अयन विज्ञान रूपं । रवन गिरिजा भवन भूधराधिप सदा, श्रवण कुण्डल वदन छबि-अनूपं ॥ चर्म असि शूल धर डमरु शर चापकर, यान वृषभेश करुणानिधानं । जरत सुर असुर नर-लोक शोकाकुलं, मृदुलचित अजित कृत गरल-पानं ॥ भस्म तनु भूषणं व्याघ्र चर्माम्बरं, उरग

नरमौलि उरमाल धारी। डाकिनी शाकिनी खेचरं भूचरं, यंत्र भञ्जन प्रबल कल्मषारी॥ काल अतिकाल कलि व्याल व्यालाद खग, त्रिपुर मर्दन भीमकर्म भारी। सकल लोकान्त कल्पान्त शूलाग्र कृत, दिग्गज व्यक्त गुण नृत्यकारी॥ पाप सन्ताप घनघोर संसृति दीन, भ्रमत जगयोनि नहिं कोपि त्राता। पाहि भैरव रूप रामरूपी रुद्र, बन्धु गुरु जनक जननी विधाता॥ यस्य गुण गण गनति विमलमति शारदा, निगम नारद प्रमुख ब्रह्मचारी। शेष सर्वेश आसीन आनन्द बन, दासतुलसी प्रणत त्रास हारी॥ ११॥

शङ्करं सम्प्रदं सज्जनानन्ददं, शैलकन्या बरं परमरम्यं। काम मद मोचनं तामरस लोचनं, वामदेवं भजे भावगम्यं॥ कम्बु कुन्देन्दु कर्पूर गौरं शिवं, सुन्दरं सच्चिदानन्द कन्दं। सिद्ध सनकादि योगीन्द्र वृन्दारका, विष्णु विधि वन्द्य चरणारविन्दं॥ ब्रह्मकुल वल्लभं सुलभ मति दुर्लभं, विकटवेषं विभुं वेद पारं। नौमि करुणाकरं गरल गङ्गाधरं, निर्मलं निर्गुणं

निर्विकारं ॥ लोकनाथं शोक शूल निर्मूलिनं, शूलिनं मोहतम भूरि भानुं। काल कालं कलातीत मजरं हरं, कठिन कलिकाल कानन कृशानुं ॥ तज्ञ मज्ञान पाथोधि घट सम्भवं, सर्वगं सर्व सौभाग्य मूलं। प्रचुर भवभञ्जनं प्रणतजन रञ्जनं, दासतुलसी शरण सानुकूलं ॥ १२ ॥

राग बसन्त।

सेवहु शिवचरण सरोज रेनु। कल्याण अखिलप्रद कामधेनु ॥ कर्पूर गौर करुणा उदार। संसार सार भुजगेन्द्र हार ॥ सुख जन्म भूमि महिमा अपार। निर्गुण गुणनायक निराकार ॥ त्रयनयन मयनमर्दन महेश। अहँकार निहार उदित दिनेश ॥ वर बाल निशाकर मौलिभ्राज। त्रैलोक शोकहर प्रथमराज ॥ जिनकहँ विधि सुगति न लिखीभाल। तिनकी गति काशीपति कृपाल ॥ उपकारी को पर हर समान। सुर असुर जरत कृत गरल पान ॥ बहु कल्प उपाय करिय अनेक। बिनु शम्भु कृपा

नहिं भौ विवेक ॥ विज्ञान भवन गिरिसुता रमन । कह तुलसिदास मम त्रास शमन ॥ १३ ॥

देखो बन बन्यो आज उमाकन्त । जनु पेखन आई ऋतु बसन्त ॥ मनु तनु द्युति चम्पक कुसुम माल । बर बसन नील नूतन तमाल ॥ कल कदलि जङ्घ पदकमल लाल । सूचक कटि केहरि गति मराल ॥ भूषण प्रसून बहु विविध रङ्ग । नूपुर किङ्किणि कलरव बिहङ्ग ॥ कर नवल बकुल पल्लव रसाल । श्रीफल कुच कञ्चुकि लता जाल ॥ आनन सरोज कच मधुप पुञ्ज । लोचन विशाल नवनील कञ्ज ॥ पिक वचन चरित बर बरहि कीर । सित सुमन हास लीला समीर ॥ कह तुलसिदास सुनु शिव सुजान । उर बसि प्रपञ्च रच पञ्चवान ॥ करि कृपा हरिय भ्रमफन्द काम । जेहि हृदय बसहिं सुखराशि राम ॥ १४ ॥

राग मारू ।

दुसह दोष दुख दलनि करु देवि दाया । विश्व-

मूलासि जन सानुकूलासि शूलधारिणि महामूल माया ॥ तड़ित गर्भाङ्ग सर्वाङ्ग सुन्दर लसत, दिव्य-पट भव्यभूषण विराजे । बाल मृग मंजु खञ्जन विलोचनि चन्द्, वदन लखि कोटि रतिमार लाजै ॥ रूप सुख शील सीमासि भीमासि रामासि वामासि बर बुद्धि बानी । छमुख हेरम्ब अम्बासि जगदम्बिके, शम्भुजायासि जयजय भवानी ॥ चण्ड भुजदण्ड खण्डनि विहण्डनि मुण्ड, महिष मद भङ्गकरि अङ्ग तोरे । शुम्भ निःशुम्भ कुम्भीश रणकेशरिनि, क्रोध वारिधि बैरि वृन्द बोरे ॥ निगम आगम अगम गुर्वि तव गुण कथन, उर्विधर कहत जेहि सहसजीहा । देहिमा मोहि प्रण प्रेम निज नेम यह, रामघनश्याम तुलसी पपीहा ॥ १६ ॥

राग सारङ्ग ।

जयजय जगजननि देवि सुर नर मुनि असुर सेवि, भक्त मुक्ति दायनि भयहरणि कालिका । मङ्गल मुद सिद्धि सदनि पर्व सर्वरीश वदनि, ताप तिमिर तरुण तरणि किरण मालिका ॥ वर्म चर्म कर कृपाण

शूल शेल धनुष बाण, धरणि दलनि दानव दल रण करालिका । पूतना पिशाच प्रेत डाकिनि शाकिनि समेत, भूत वैताल ग्रह खग मृगालि जालिका ॥ जय महेश भामिनी अनेकरूप नामिनी समस्त लोक स्वामिनि हिमशैल बालिका । रघुपति पद पदुम प्रेम तुलसी चह अचल नेम, देहि ह्वै प्रसन्न पाहि प्रणत पालिका ॥ १६ ॥

जय भगीरथ नन्दिनि मुनिचय चकोर चन्दिनि, नर नाग विबुध वन्दिनि जय जह्नुबालिका । विष्णु पद सरोज जासि ईश शीश पर विभासि, त्रिपथ-गासि पुण्यराशि पापछालिका ॥ विमल विपुल बहसि वारि शीतल त्रयताप हारि, भँवर वर विभङ्ग तर तरङ्ग मालिका । पुरजन पूजोपहार शोभित शशि धवल धार, भञ्जनि भुविभार भक्तकल्प थालिका ॥ निजतट बासी विहङ्ग जल थल चर पशु पतङ्ग, कीट जटिल तापस सब सरिस पालिका । तुलसी तव तीरतीर सुमिरत रघुवंश वीर, विचरत मति देहि मोह महिष कालिका ॥ १७ ॥

राग रामकली ।

जयतिजय सुरसरी जगदखिल पावनी । विष्णु पदकञ्ज मकरन्द इव अम्बुबर, बहसि दुखदहसि अघबृन्द विद्रावनी ॥ मिलित जलपात्र अजयुक्त हरि चरणरज, विरजतर वारि त्रिपुरारि शिर धामिनी । जह्नु कन्या धन्य पुण्यकृत सगरसुत, भूधर-द्रोणि विद्दरणि बहुनामिनी ॥ यक्ष गन्धर्व मुनि किन्नरोरग दनुज, मनुज मज्जहिं सुकृत पुञ्ज युत कामिनी । स्वर्गसोपान विज्ञान ज्ञानप्रदे, मोह मद मदन पाथोज हिम यामिनी ॥ हरित गम्भीर वानीर दुहुँतीर वर, मध्य धाराविशद विश्व अभिरामिनी । नीलपर्यङ्क कृत शयन सर्पेश जनु, सहस्र शीशावली स्रोत सुर-स्वामिनी ॥ अमित महिमा अमितरूप भूपावली, मुकुटमणि वन्दिते लोक त्रयगामिनी । देहि रघुवीरपद प्रीति निर्भर मातु, दासतुलसी त्रास हरणि भवभामिनी ॥ १८ ॥

हरति पाप त्रिविध ताप, सुमिरत सुरसरित ।

विलसति महि कल्पबेलि, मुद मनोर्थ फरित ॥ सोहत शशि धवलधार, सुधा सलिल भरित । विमलतर तरङ्गलसत, रघुवरसे चरित ॥ तोबिनु जगदम्ब गङ्ग, कलियुगका करित । घोरभव अपारसिन्धु, तुलसी किमि तरित ॥ १९ ॥

ईश शीश बससि त्रिपथ लससि नभ पताल धरनि । मुनि सुर नर नाग सिद्ध, सुजन मङ्गलकरनि ॥ देखत दुख दोष दुरित, दाह दारिद दरनि । सगर सुवन सासति शमनि, जलनिधि जल भरनि ॥ महिमाकी अवधि करसि, वहु विधि हरि हरनि । तुलसी करु बानि विमल, विमल वारि वरनि ॥ २० ॥

राग बिलावल ।

यमुना ज्यों ज्यों लागी बाढ़न । त्यों त्यों सुकृत सुभट कलि भूपहि, निदरि लगे बहि काढ़न ॥ ज्यों ज्यों जल मलीन त्यों त्यों यम, गण मलीन लहै आढ़न । तुलसिदास जगदघ जवास ज्यों, अनघ आगि लगे डाढ़न ॥ २१ ॥

राग भैरव।

सेइय सहित सनेह देह भरि, कामधेनु कलि कासी। शमनि शोक संताप पाप रुज, सकल सुमङ्गल रासी॥ मर्यादा चहुँओर चरणबर, सेवत सुर पुर-बासी। तीरथ सब शुभअङ्ग रोमशिव,-लिंग अमित अविनासी॥ अंतर अयन अयन भल थनफल, बच्छ वेद विश्वासी। गलकम्बल वरुण विभाति जनु, लूम लसति सरितासी॥ दण्डपाणि भैरव विषाण मल,-रुचि खल गण भयदा सी। लोल दिनेश त्रिलोचन लोचन, करणघण्ट घण्टा सी॥ मणिकर्णिका वदन शशि सुन्दर, सुरसरि सुख सुखमा सी। स्वारथ पर-मारथ परिपूरण, पञ्चकोश महिमा सी॥ विश्वनाथ पालक कृपालुचित, लालति नित गिरिजा सी। सिद्ध शची शारद पूजहिं मन, जोगवत रहति रमा सी॥ पञ्चाक्षरी प्राण मुद माधव, गव्य सुपञ्चनदा सी। ब्रह्म जीव सम राम नाम दोउ, आखर विश्व विकासी॥ चारितु चरति करम कुकरम करि,

मरत जीवगण घासी । लहत परमपद पयपावन जेहि, चहत प्रपञ्च उदासी ॥ कहत पुराण रची केशव निज,-कर करतूति कला सी । तुलसी बसि हरपुरी रामजपु, जो भौ चहै सुपासी ॥ २२ ॥

राग बसन्त ।

सब शोच विमोचन चित्रकूट । कलिहरण करण कल्याण बूट ॥ शुचि अवनि सुहावनि आलबाल । कानन विचित्र बारी विशाल ॥ मन्दाकिनि मालिनि सदा सींच । वरवारि विषम नरनारि नीच ॥ शाखा सुशृङ्ग भूरुह सुपात । निर्झर मधुवर मृदु मलय वात ॥ शुक पिक मधुकर मुनिवर विहारु । साधन प्रसून फल चारि चारु ॥ भव घोर घाम हर सुखद छांह । थप्यो थिर प्रभाव जानकी नाह ॥ साधक सुपथिक बड़ भाग पाइ । पावत अनेक अभिमत अघाइ ॥ रसएक रहित गुण कर्म काल । सिय राम लषण पालक कृपाल ॥ तुलसी जो रामपद चहसिप्रेम । सेइय गिरि करि निरुपाधि नेम ॥ २३ ॥

राग कान्हरा।

अब चित चेति चित्रकूटहि चल। कोपित कलि लोपित मंगल मग, विलसत बढ़त मोह माया मल॥ भूमि विलोकि रामपद अङ्कित, बन विलोकि रघुवर विहार थल। शैल शृंग भवभंग हेतु लखि, दलन कपट पाखण्ड दम्भ दल॥ जहँ जनमे जगजनक जगतपति, विधि हरि हर परिहरि प्रपञ्च छल। सकृत प्रवेश करत जेहि आश्रम, विगत विषाद भये पारथ नल॥ न करु विलम्ब विचारु चारु मति, वर्ष पाछिले सम अगिलो पल। मंत्र सो जाइ जपहि जो जपत भे, अजर अमर हर अँचइ हलाहल॥ रामनाम जप जाग करत नित मज्जत पय पावनि पीवत जल। करिहैं राम भावतो मनको, सुखसाधन अनयास महाफल॥ कामद मणि कामता कलपतरु, सो युगयुग जागति जगतीतल। तुलसी तोहि विशेष बूझिये, एक प्रतीति प्रीति एकै बल॥ २४॥

राग धनाश्री।

अञ्जनागर्भ अम्भोधि सम्भूत विधु, विबुध कुल

कैरवानन्दकारी । केसरी चारु लोचन चकोरक सुखद, लोकगण शोक सन्ताप हारी ॥ जयति जय बाल कपि केलि कौतुक उदित, चण्डकर मण्डल ग्रास कर्ता । राहु रवि शक्र पवि गर्व खर्वीकरण, शरण भयहरण जय भुवनभर्ता ॥ जयति रणधीर रघुवीर हित देवमणि, रुद्र अवतार संसार पाता । विप्र सुर सिद्ध मुनि आशिषाकार वपुष, विमल गुण बुद्धि वारिधि विधाता ॥ जयति सुग्रीव शिक्षादि रक्षण निपुण, बालि बलशालि वध मुख्य हेतु । जलधि लङ्घन सिंह सिंहिका मद मथन, रजनिचर नगर उत्पातकेतू ॥ जयति भूनन्दिनी शोच मोचन विपिन, दलन घननाद वश विगत शङ्का । लूम लीला अनल ज्वालमालाकुलित, होलिका करन लङ्केश लङ्का ॥ जयति सौमित्र रघुनन्दनानन्दकर, ऋच्छ कपि कटक सङ्कट विघाई । बांधि वारिधि सेतु अमर मङ्गल हेतु, भानुकुल केतु रण विजयदाई ॥ जयति जय बज्रतनु दशन नख मुख विकट, चण्ड भुजदण्ड तरु शैल पानी । समर तैलिकयंत्र तिल

तमीचर निकर, पेरि डारे सुभट घालि घानी ॥ जयति दशकण्ठ घटकरण वारिदनाद, कदन कारण कालनेमि हन्ता । अघट घटना सुघट सुघट विघटन विकट, भूमि पाताल जल गगन गन्ता ॥ विश्व विख्यात बानैत विरुदावली, विदुष बरणत वेद विमल बानी । दास तुलसी त्रास समन सीतारमन, सङ्ग शोभित राम राजधानी ॥ २८ ॥

मर्कटाधीश मृगराज विक्रम महादेव, मुद मङ्गलालय कपाली । मोह मद कोह कामादि खल सङ्कुला, घोर संसार निशि किरनमाली ॥ जयति लसदञ्जना दितिज कपि केशरी, कश्यपप्रभव जगदार्ति हर्ता । लोक लोकप कोक कोकनद शोकहर, हंस हनुमान कल्याण कर्ता ॥ जयति सुविशाल विकराल विग्रह वज्र, सार सर्वाङ्ग भुजदण्ड भारी । कुलिश नख दशन वर लसत बालधि बृहद, वीर शस्त्रास्त्र धर कुधरधारी ॥ जानकी शोच सन्ताप मोचन राम, लक्ष्मणानन्द वारिज विकाशी । कीश कौतुक केलि लूम लङ्का दहन, दलन कानन तरुण

तेज राशी ॥ जयति पाथोधि पाषाण जलयान कर, यातुधान प्रचुर हर्ष हाता । दुष्ट रावण कुम्भकर्ण पाकारिजित, मर्मभित्कर्म परिपाक दाता ॥ जयति भुवनैक भूषण विभीषण वरद, विहित कृत राम सङ्ग्राम शाका । पुष्पकारूढ़ सौमित्र सीता सहित, भानुकुल भानु कीरति पताका ॥ जयति पर यन्त्र मन्त्राभिचार ग्रसन, कार्मण कूट कृत्यादि हन्ता । शाकिनी डाकिनी पूतना प्रेत वैताल भूत प्रमथ यूथ जन्ता ॥ जयति वेदान्त विधि विविध विद्या विशद, वेद वेदाङ्गविद ब्रह्मवादी । ज्ञान वैराग्य विज्ञान भाजन विभव, विमल गुण गनत शुक नारदादी ॥ काल गुण कर्म माया मथन निश्चल, ज्ञानव्रत सत्यरत धर्मचारी । सिद्ध सुर वृन्द योगीन्द्र सेवित सदा, दास तुलसी प्रणत भय तमारी ॥ २६ ॥

मङ्गलागार संसार भारापहर, वानराकार विग्रह पुरारी । राम रोषानल ज्वालमालामिष, ध्वान्तचर शलभ संहारकारी ॥ जयति मरुदञ्जनामोद मन्दिर नतग्रीव सुग्रीव दुःखैक बन्धो । यातुधानोद्धत क्रुद्ध

कालाग्नि हर, सिद्ध सुर सज्जनानन्द सिन्धो॥ जयति रुद्राग्रणी विश्व विद्याग्रणी, विश्व विख्यात भट चक्रवर्त्ती। साम गाताग्रणी काम जेताग्रणी, रामहित रामभक्तानुवर्त्ती॥ जयति सङ्ग्राम जय राम सन्देह हर, कौशला कुशल कल्याण भाषी। राम विरहार्क सन्तप्त भरतादि नर,-नारि शीतल करण कल्पशाषी॥ जयति सिंहासनासीन सीतारमन, निरषि निर्भर हरष नृत्यकारी। राम सम्म्राज शोभा सहित सर्वदा, तुलसि मानस रामपुर विहारी॥ २७॥

वातसञ्जात विख्यात विक्रम बृहद्बाहु बल विपुल बालधि विशाला। जातरूपाचलाकार विग्रह लसत, लोम विद्युल्लता ज्वालमाला॥ जयति बालार्क बर बदन पिङ्गल नयन, कपिश कर्कश जटा जूट धारी। विकट भृकुटी वज्र दशन नख वैरि मद, मत्त कुञ्जर पुञ्ज कुञ्जरारी॥ जयति भीमार्जुन व्यालसूदन गर्व,-हर धनञ्जय रथ त्राणकेतू। भीषम द्रोण करणादि पालित काल, दृक सुयोधन चमू

निधन हेतू ॥ जयति गतराज दातार हरतार संसार सङ्कट दनुजदर्प हारी । ईति अतिभीति ग्रह प्रेत चौरानल, व्याधि बाधा शमन घोरमारी ॥ जयति निगमागम व्याकरण कर्णलिपि, काव्य कौतुक कला कोटि सिन्धो । साम गायक भक्त कामदायक वामदेव श्रीराम प्रिय प्रेम बन्धो ॥ जयति घर्मान्शु सन्दग्ध सम्पाति नव,-पक्ष लोचन दिव्य देह दाता । काल कलि पाप सन्ताप सङ्कुल सदा, प्रणत तुलसीदास तात माता ॥ २८ ॥

निर्भरानन्द सन्दोह कपि केशरी, केशरी सुवन भुवनैक भर्ता । दिव्य भूम्यञ्जना मंजुलाकर मणे, भक्त सन्ताप चिन्तापहर्त्ता ॥ जयति धर्मार्थ कामापवर्गद विभो, ब्रह्म लोकादि वैभव विरागी । वचन मानस कर्म सत्य धर्मव्रती, जानकीनाथ चरणानुरागी ॥ जयति विहँगेश बल बुद्धि वेगाति मद, मथन मन्मथ मथन ऊर्ध्वरेता । महानाटक निपुण कोटि कवि कुल तिलक, गान गुण गर्व गन्धर्व जेता ॥ जयति मन्दोदरी केश कर्षण विद्यमान दशकण्ठ

भट मुकुट मानी । भूमिजा दुःख सञ्जात रोषान्त कृज्जातना जन्तु कृत यातुधानी ॥ जयति रामायण श्रवण सञ्जात रोमाञ्च लोचन सजल शिथिल वाणी । रामपद पद्म मकरन्द मधुकर पाहि, दास तुलसी शरण शूल पाणी ॥ २९ ॥

राग सारङ्ग।

जाके गति है हनुमानकी । ताकी पैज पूजि आई यह, रेखा कुलिश पषानकी ॥ अघटित घटन सुघट विघटन अस, विरदावली न आनकी । सुमिरत संकट शोच विमोचन, मूरति मोद निधानकी ॥ तापर सानुकूल गिरिजा हर, लषण राम अरु जानकी । तुलसी कपिकी कृपाविलोकनि, खानि सकल कल्यानकी ॥ ३० ॥

राग गौरी।

ताकिहै तमकि ताकी ओरको । जाकोहै सब-भाँति भरोसो, कपि केशरी किशोरको ॥ जनरञ्जन अरिगण गञ्जन मुख,-भञ्जन खल वरजोरको । वेद

पुराण प्रगट पुरुषारथ, सकल सुभट शिरमोरको ॥ उथपे थपन थप्यो उथपन करि, विबुधनि बन्दीछोरको । जलधि लंघि दहिलंक प्रबलदल, दलन निशाचर घोरको ॥ जाको बाल विनोद समुझि जिय, डरत दिवाकर भोरको । जाकी चिबुक चोट चूरण किय, रदमद कुलिश कठोरको ॥ लोकपाल अनुकूल विलोकिव, चहत विलोचन कोरको । सदा अभय जय मुद मंगल मय, जो सेवक रणरोरको ॥ भगत कामतरु नाम राम परिपूरण चन्द चकोरको । तुलसी फलचारो करतल यश, गावत गई बहोरको ॥ ३१ ॥

राग बिलावल ।

ऐसी तोहि न बूझिये हनुमान हठीले । साहब कहूँ न रामसे तुमसे न वसीले ॥ तेरे देखत सिंहके शिशु, मेढक लीले । जानतहौं कलि तेरेऊ मनु, गुण गण कीले ॥ हांक सुनत दशकन्धके भये, बन्धन ढीले । सोबल गयो किधौं भये अब, गर्व गहीले ॥

सेवकको परदाफटै तुम, समरथ सीले । अधिक आपुते आपनो सुनि, मान सहीले ॥ साँसति तुलसी दासकी लखि, सुयश तुहीले । तिहूँकाल तिनको भलो जे, रामरँगीले ॥ ३२ ॥

समरथ सुवन समीरके रघुवीर पियारे । मोपर कीबे तोहि जो, करिलेहि भियारे ॥ तेरी महिमाते चलै, चिञ्चिनी चियाँरे । अँधियारो मेरि बार क्यों, त्रिभुवन उँजियारे ॥ केहि करणी जन जानिकै, सनमान कियारे । केहि अघ अवगुण आपनो, करि डारि दियारे ॥ खाई खोंची मांगि मैं तेरो नाम लियारे । तेरे बल बलि आजलौं, जग जागि जियारे ॥ जो तोसों होतो फिरो मेरो हेतु हियारे । तौ क्यों वदन दिखावतो, कहिवचन इयारे ॥ तोसो ज्ञान निधानको, सर्वज्ञ वियारे । हौं समुझत साँइ द्रोहकी, गति छार छियारे ॥ तेरे स्वामी रामसे, स्वामिनी सियारे । तहँ तुलसी कहँ कौनको, काको तकियारे ॥ ३३ ॥

अति आरत अति स्वारथी, अतिदीन दुखारी ।

इनको विलग न मानिये, बोलहिं न विचारी ॥ लोक रीति देखी सुनी, व्याकुल नरनारी । अति-वरषे अनवरषेहूँ देहिं दैवहि गारी ॥ नाकहि आये नाथसों, साँसति भइ भारी । कहि आयो कीबी क्षमा, निजओर निहारी ॥ समय साँकरे सुमिरिये, समरथ हितकारी । सो सब विधि उपकारकर, अपराध बिसारी ॥ बिगरी सेवकको सदा, साहबहि सुधारी । तुलसी पर तेरी कृपा, निरुपाधि निरारी ॥ ३४ ॥

कटुकहिये गाढ़परे, सुनि समुझि सुसाँई । करहिं अनभलेको भलो, आपनी भलाई ॥ समरथ शुभ जो पावहीं, वीर पीर पराई । ताहि तके सब ज्यों नदी, वारिधि न बुलाई ॥ अपने अपनेको भलो, चहें लोग लुगाई । भावै जो जेहि तेहि भजै, शुभ अशुभ सगाई ॥ बाँह बोलदै थापिये, जो निज बरिआई । बिनु सेवासो पालिये, सेवककी नाई ॥ चूक चपलता मेरियै, तूँ बड़ो बड़ाई । होत आदरे ढीठहै, अतिनीच निचाई ॥ वन्दिछो

विरुदावली, निगमागम गाई । नीको तुलसी दासको, तेरियै निकाई ॥ ३८ ॥

राग गौरी ।

मंगलमूरति मारुत नन्दन । सकल अमंगल मूल निकन्दन ॥ पवनतनय सन्तन हितकारी । हृदय विराजत अवध विहारी ॥ मातु पिता गुरु गणपति शारद । शिवा समेत शम्भु शुक नारद ॥ चरण वन्दि बिनवों सबकाहू । देहु रामपद नेहु निबाहू ॥ वन्दों राम लषण वैदेही । जे तुलसीके परम सनेही ॥ ३६ ॥

दण्डक ।

लाड़िले लषणलाल हितहौ जनके । सुमिरे सङ्कटहारी सकल सुमङ्गलकारी, पालक कृपाल आपनेके पनके ॥ धरणी धरनहार भञ्जन भुवन भार, अवतार साहसी सहसफनके । सत्यसन्ध सत्यव्रत परम धरम रत, निर्मल करम वचन अरु मनके ॥ रूपनिधान धनुबान पानि तूण कटि, वीर

विदित जितैथा बड़े रनके । सेवक सुखदायक सबल सबलायक, गायक जानकीनाथ गुण गनके ॥ भावते भरतके सुमित्रा सीताके दुलारे, चातक चतुर राम श्याम घनके । वल्लभ उर्मिलाके सुलभ सनेहवश धनी धन तुलसीसे निरधनके ॥ ३७ ॥

राग धनाश्री ।

लक्ष्मणानन्त भगवन्त भूधर भुजगराज भुवनेश भूभार भारी । प्रलय पावक महा ज्वालमाला वमन शमन सन्ताप लीलावतारी ॥ दाशरथि समरथ सुमित्रा सुवन, शत्रुसूदन राम भरत बन्धो चारु चम्पक वरण बसन भूषण धरण, दिव्यतर भव्य लावण्य सिन्धो ॥ जयति गांधेय गौतमजनक सुखजनक, विश्वकण्टक कुटिल कोटि हन्ता । वच चय चातुरी परशुधर गर्वहर, सर्वदा रामभद्रानुगन्ता ॥ जयति सीतेश सेवासरस विषयरस, निरुपाधि धुर धर्मधारी । विपुल बलमूल शार्दूल विक्रम जलदनाद मर्दन महावीर भारी ॥ जय

संग्राम सागर भयंकर तरण, रामहित करण वरबाहु सेतू । उर्मिला रवन कल्याण मंगल भवन, दास तुलसी दोष दवन हेतू ॥ ३८ ॥

भूमिजा रमण पदकञ्ज मकरन्द रस रसिक मधुकर भरत भूरिभागी । भुवन भूषण भानुवंश भूषण भूमिपाल मणि रामचन्द्रानुरागी ॥ जयति विबुधेश धनदादि दुर्लभ महाराज सम्राज सुखपद विरागी । खड्गधाराव्रती प्रथमरेखा प्रगट, शुद्धमति युवति पतिप्रेम पागी ॥ जयति निरुपाधि भक्तिभाव यन्त्रित हृदय, बन्धुहित चित्रकूटाद्रिचारी । पादुकानृप सचिव पुहुमिपालक परम,-धीर गम्भीर वरवीर भारी ॥ जयति सञ्जीविनी समय संकट हनूमान धनुबाण महिमा बखानी । बाहुबल विपुल परमित पराक्रम अतुल, गूढ़गति जानकी जान जानी ॥ जयति रणअजिर गन्धर्वगण गर्वहर, फेरिकिय रामगुण गाथगाता । माण्डवी चित्त चातक नवाम्बुदवरण, शरण तुलसीदास अभयदाता ॥ ३९ ॥

जयति जय शत्रुकरि केशरी शत्रुहन, शत्रुतम

तुहिन हर किरणकेतू । देव माहिदेव माहि धेनु सेवक
सुजन, सिद्ध मुनि सकल कल्याण हेतू ॥ जयति ज
सर्वांग सुन्दर सुमित्रासुवन, भुवन विख्यात भरतानुग
गामी । वर्म चर्मासि धनुबाण तूणीरधर, शत्रुसंक
शमन यत्प्रणामी ॥ जयति लवणाम्बुनिधि कुम्भज
सम्भव महा, दनुज दुर्जन दवन दुरित हारी ।
लक्ष्मणानुज भरत राम सीता चरण, रेणु भूषित
भाल तिलकधारी ॥ जयति श्रुतिकीर्ति वल्लभ
सुदुर्लभ सुलभ, नमत नर्मद भक्त भक्तिदाता ।
दास तुलसी चरण शरण सीदत विभो, पाहि दीना
सन्तापहाता ॥ ४० ॥

राग केदारा ।

कबहुँक अम्ब अवसर पाइ । मेरियो सुधि
द्याइबी कछु, करुण कथा चलाइ ॥ दीन सब अँग
हीन छीन, मलीन अघी अघाइ । नामलै भरे उदर
इक प्रभु, दासीदास कहाइ ॥ बूझिहैं सो कौन
कहिबी, नाम दशा जनाइ । सुनत राम कृपालु

मेरि, बिगरियो बनिजाइ ॥ जानकी जगजननि जनकी, किये बचन सहाइ । तरै तुलसीदास भव तव, नाथ गुणगण गाइ ॥ ४१ ॥

कबहुँ समय सुधि द्याइबी, मेरि मातुजानकी । जन कहाइ नाम लेतहौं किये पन, चातक ज्यों प्यास प्रेम प्रानकी ॥ सरल प्रकृति आपु जानिये, करुणानिधानकी । निजगुण अरिकृत अनहितो दासदोष, सुरति चितरहति न दिये दानकी ॥ बानि बिसारनशील है, मानद अमानकी । तुलसिदास न बिसारिये मन क्रम बचन, जाके सपनेहुँ गति न आनकी ॥ ४२ ॥

राग धनाश्री ।

जयति सच्चित व्यापकानन्द यत ब्रह्म विग्रह व्यक्त लीलावतारी । विकल ब्रह्मादि सुर सिद्ध सङ्कोचवश, विमल गुणगेह नरदेह धारी ॥ कोशलाधीश कल्याण कोशलसुता, कुशल कैवल्यफल चारु चारी । वेद बोधित कर्मधर्म धरणी धेनु, विप्र

सेवक साधु मोदकारी ॥ जयति ऋषि मखपाल
शमन सज्जनशाल, शापवश मुनिवधू पापहारी।
भञ्जि भवचाप दलिदाप भूपावली, सहित भृगुनाथ
नतमाथ भारी ॥ धार्मिक धीर धुर वीर रघुवीर गुरु
मातु पितु बन्धु वचनानुसारी। चित्रकूटाद्रि वि-
न्ध्याद्रि दण्डक विपिन, धन्यकृत पुण्य कानन
विहारी ॥ जयति पाकारिसुत काक करतूतिफल
दानि खनि गर्त गोपित विराधा। दिव्य देवी वेष देखि
लखि निशिचरी, जनु विडम्बित करी विश्व बाधा ॥
जयति खर त्रिशिर दूषण चतुर्दश सहस, सुभ
मारीच संहारकर्ता । गिद्ध शबरी भक्ति विवश
करुणासिन्धु, चरित निरुपाधि त्रिविधार्ति हर्ता ।
जयति मदअन्ध कुकबन्ध वधि बालि बलशालि
वधकरण सुग्रीव राजा । सुभट मर्कट भालु कट
सङ्कट सजत नमत पद रावणानुज निवाजा ।
जयति पाथोधिकृत सेतु कौतुक हेतु, कालम
अगम लइ ललकि लङ्का । सकुल सानुज सद
दलित दशकण्ठ रण, लोक लोकप कि

रहित शङ्का ॥ जयति सौमित्र सीता लषण सहित चलि, पुष्पकारूढ निज राजधानी। दास तुलसी मुदित अवधवासी सकल, रामभे भूप वैदेहि रानी ॥ ४३ ॥

राजराजेन्द्र राजीवलोचन राम, नामकलि कामतरु श्यामशाली। अनय अम्भोधि कुम्भज निशाचर निकर, तिमिर घन घोर खर किरणमाली ॥ जयति मुनिदेव नरदेव दशरथके, देव मुनि वन्द्य किय अवधवासी। लोक नायक कोक शोक सङ्कट शमन, भानुकुल कमल कानन विकासी ॥ जयति शृंगाररस तामरस दाम द्युति, देह गुण गेह विश्वोपकारी। सकल सौभाग्य सौन्दर्य सुखमारूप, मनोभव कोटि गर्वापहारी ॥ सुभग शारंग सुनिखंग शायक शक्ति, चारु चर्मासि वर वर्म धारी। धर्मधुर धीर रघुवीर भुजबल अतुल, हेलया दलित भूभार भारी ॥ जयति कलधौत मणि मुकुट कुण्डल श्रवण, तिलक भलभाल विधुवदन शोभा। दिव्यभूषण बसन पीत उपवीत किय, ध्यान कल्याण भाजन न

शोभा ॥ भरत सौमित्र शत्रुघ्न सेवित सुमुख सचिव
सेवक सुखद सर्वदाता । अधम आरत दीन पतित
पातक पीन सकृत नतमात्र कहि पाहिपाता ॥
जयति जय भुवन दशचारि यश जगमगत पुण्यमय
धन्य जय रामराजा । चरित सुरसरित कवि मुख्य
गिरि निःसरित ।पिवत मज्जत मुदित सतसमाजा ।
जयति वर्णाश्रमाचार पर नारिनर, सत्य सम द
दया दान शीला । विगत दुख दोष सन्तोष सु
सर्वदा, सुनत गावत राम राज लीला ॥ जयति
वैराग्य विज्ञान वारान्निधे, नमत नर्मद पाप ता
हर्ता । दास तुलसी चरण शरण संशय हरण, दी
अवलम्ब वैदेहि भर्ता ॥ ४३ ॥

राग गौरी ।

श्रीरामचन्द्र कृपालु भजुमन, हरण भवभ
दारुणं । नवकञ्ज लोचन कञ्ज मुख कर, कञ्ज प
कञ्जारुणं ॥ कन्दर्प अगणित अमित छवि नव नी
नीरज सुन्दरं । पटपीत मानहुँ तड़ित रुचिशुचि

नौमि जनक सुता वरं ॥ भजु दीनबन्धु दिनेश दानव दैत्यवंश निकन्दनं । रघुनन्द आनंद कन्द कोशल, चन्द दशरथनन्दनं ॥ शिर मुकुट कुण्डल तिलक चारु, उदार अंग विभूषणं । आजानुभुज शर-चापधर, संग्रामजित खरदूषणं ॥ इति वदत तुलसी-दास शङ्कर, शेष मुनि मन रञ्जनं । ममहृदय कञ्ज निवासकारि, कामादि खलदल गञ्जनं ॥ ४५ ॥

राग रामकली ।

रामजपु रामजपु रामजपु रामजपु रामजपु मूढ-मन बारबारं । सकल सौभाग्य सुखखानि जियजानि सठ, मानिविश्वास वद वेदसारं ॥ कोशला इन्द्र नव नील कञ्जाभ तनु, मदनारिपु कञ्जहृदि चञ्चरीकं । जानकीरवन सुखभवन भुवनैक प्रभु, नम भज स्मर परम कारुणीकं ॥ दनुजवन धूमध्वज पीन आजानु-भुज, दण्ड कोदण्ड वर चण्डवानं । अरुणकर चरण मुख नयन राजीव गुणअयन बहुमयन शोभा निधानं ॥ वासना वृन्द कैरव दिवाकर काम,

क्रोध मद कञ्ज कानन तुषारं । लोभ अति मत्त नागेन्द्र पञ्चाननं, विप्रहित हरण संसारभारं ॥ केशवं क्लेशहं केश वन्दित पदद्वन्द्व मन्दाकिनी मूलभूतं । सर्वदानन्द सन्दोह मोहापहं, घोरसंसार पाथोधि पोतं ॥ शोक सन्देह पाथोद पटलानिलं, पाप पर्वत कठिन कुलिशरूपं । सन्तजन कामधुक धेनु विश्राम-प्रद, नाम कलिकलुष भञ्जन अनूपं ॥ धर्म कल्पद्रुमं नाम हरिधाम पथ, सम्बलं मूलमिद मेव मेकं । भक्ति वैराग्य विज्ञान सम दान दम, नाम आधीन साधन अनेकं ॥ तेन तप्तं हुतं दत्त मेवाखिलं, तेन सर्वं कृतं कर्म जालं । येन श्रीराम नामामृत पान कृत मनिश मनवद्य मवलोक्य कालं ॥ श्वपच खल भिल्ल यमनादि हरि लोक गत, नाम बल विपुल मति मलिन परसी । त्यागि सब आस संत्रास भव पास असि, निसित हरि नाम जपु दास तुलसी ॥ ४६ ॥

ऐसी आरती रामकी करहि मन । हरण दुख द्वन्द्व गोविन्द आनन्द घन ॥ अचर चर रूप हरि सर्वगत

सर्वदा, बसत इति वासना धूप दीजै । दीप निज बोधगत क्रोध मद मोह तम, प्रौढ अभिमान चित्तवृत्ति छीजै ॥ भाव अतिशय विशद प्रवर नैवेद्य शुभ, श्रीरमण परम सन्तोषकारी । प्रेम ताम्बूल गत शूल संशय सकल, विपुल भव बासना बीज हारी ॥ अशुभ शुभ कर्म घृत पूर्ण दशवर्तिका, त्यागपावक सतोगुण प्रकासं । भक्ति वैराग्य विज्ञान दीपावली, अर्पि नीराञ्जनं जगनिवासं ॥ विमल हृदि भवन कृत शान्ति पर्यङ्क शुभ, शयन विश्राम श्रीराम राया । क्षमा करुणा प्रमुख तत्र परिचारिका, यत्र हरि तत्र नहिं भेद माया ॥ आरती निरत सनकादि श्रुति शेष शिव, देवऋषि अखिल मुनि तत्व दरसी । जोइ करै सोइ तरै परिहरै काम सब, वदत इति अमल मति दास तुलसी ॥ ४७ ॥

हरति आरति सकल आरती रामकी । दहनि दुख दोष निर्मूलिनी कामकी ॥ शुभग सौरभ धूप दीप बर मालिका । उडत अघ विहँग सुनि ताल करता-

लिका ॥ भगत हृदि भवन अज्ञान तम हारिणी । विमल विज्ञान मय तेज विस्तारिणी ॥ मोह मद कोह कलि कञ्ज हिमयामिनी । मुक्तिकी दूतिका देह द्युति दामिनी ॥ प्रणत जन कुमुद वन इन्दुकर जालिका । तुलसि अभिमान महिषेश बहु कालिका ॥ ४८ ॥

हरिशङ्करी दण्डक ।

दनुज वन दहन गुण गहन गोविन्द नन्दादि आनन्द दाताविनाशी । शम्भु शिव रुद्र शङ्कर भयङ्कर भीम, घोर तेजायतन क्रोधराशी ॥ नान्त भगवन्त जगदन्त अन्तक त्रास, शमन श्रीरमन भुवनाभिरामं । भूधराधीश जगदीश ईशान विज्ञानघन ज्ञान कल्याणधामं ॥ वामनाव्यक्त पावन परावर विभो, प्रगट परमात्मा प्रकृत स्वामी । चन्द्रशेषर शूलपाणि हर अनघ अज, अमित अविछिन्न वृषभेशगामी ॥ नील जलदाभ तनु श्याम बहु कामछबि, राम राजीवलोचन कृपालं । कम्बु कर्पूर वपु

धवल निर्मल मौलि, जटा सुरतटिनि सित सुमन मालं॥ वसन किञ्जल्कधर चक्र शारङ्गदर, कञ्ज कौमोदकी अति विशालं। मार करि मत्त मृगराज त्रयनयन हर, नौमि अपहरण संसार ज्वालं॥ कृष्ण करुणा भवन दवन कालीय खल, विपुल कंसादि निर्वंशकारी। त्रिपुर मद भङ्ग कर मत्त गज चर्म धर, अन्धकोरग ग्रसन पन्नगारी॥ ब्रह्म व्यापक अकल सकलपर परमहित, ज्ञान गोतीत गुण वृत्ति-हर्ता। सिन्धु सुत गर्व गिरि वज्र गौरीश भव, दक्ष मख अखिल विध्वंसकर्ता॥ भक्ति प्रिय भक्तजन कामधुकधेनु हरि, हरण दुर्घट विकट विपति भारी। सुखद नर्मद वरद विरज अनवद्याखिल, विपिन आनन्द वीथिन विहारी॥ रुचिर हरिशङ्करी नाम मन्त्रावली, द्वन्द दुख हरणि आनन्दखानी। विष्णु शिव लोक सोपान सम सर्वदा, वदत तुलसीदास विशद वानी॥ ४९॥

भानु कुल कमल रवि कोटि कन्दर्प छबि, काल कलि व्याल मिव वैनतेयं। प्रबल भुजदण्ड परचण्ड

कोदण्ड धर, तूण वर विशिख बल मप्रमेयं ॥ अरुण राजीव दल नयन सुखमा अयन, श्याम तनु कान्ति वर वारिदाभं । तप्त काञ्चन वस्त्र शस्त्र विद्या निपुण, सिद्ध सुर सेव्य पाथोजनाभं ॥ अखिल लावण्य गृह विश्व विग्रह परम, प्रौढ गुण गूढ महिमा उदारं । दुर्द्धर्ष दुस्तर दुर्ग स्वर्ग अपवर्ग पति, भग्न संसार पादप कुठारं ॥ शाप वश मुनि वधू मुक्तिकृत विप्र-हित, यज्ञ रक्षण दक्ष पक्षकर्ता । जनक नृप सदसि शिवचाप भञ्जन उग्र, भार्गव गर्व गरिमापहर्ता ॥ गुरु गिरा गौरवं अमर दुस्त्यज राज्य, त्यक्तकारि सहित सौमित्र भ्राता । सङ्ग जनकात्मजा मनुज मनुसृत्य अज, दुष्ट बध निरत त्रैलोक्य त्राता ॥ दण्डकारण्य कृत पुण्य पावन चरण, हरण मारीच माया कुरङ्गं । बालि बल मत्त गजराज इव केशरी, सुहृद सुग्रीव दुखराशि भङ्गं ॥ ऋच्छ मर्कट विकट सुभट उद्भट समर, शैल सङ्काश रिपु त्रासकारी । बद्ध पाथोधि सुर निकर मोचन सकुल, दलन दश-शीश भुज बीस भारी ॥ दुष्ट बिबुधारि संघात अप-

हरण महिभार अवतार कारण अनूपं । अमल अन-वद्य अद्वैत निर्गुण सगुण, ब्रह्म सुमिरामि नरभूप रूपं ॥ शेष श्रुति शारदा शम्भु नारद शनक, गनत गुन अन्त नहिं तव चरित्रं । राम कामारिप्रिय अव-धपति सर्वदा, दास तुलसी त्रास निधि वहित्रं॥५०॥

जानकीनाथ रघुनाथ रागादि तम, तरणि तारुण्य तनु तेज धामं। सच्चिदानन्द आनन्द कन्दा-करं, विश्व विश्राम रामाभिरामं ॥ नील नव वारि-धर सुभग शुभ कान्तिकर, पीत कौशेय वर वसन धारी। रत्न हाटक जटित मुकुट मण्डित मौलि भानु शत सरिस उद्योत कारी ॥ श्रवण कुण्डल भाल तिलक भ्रू रुचिर अति, अरुण अम्भोज लोचन विशालं । वक्र अवलोकि त्रैलोक्य शोकापहं, मारअरि हृदय मानस मरालं ॥ नासिका चारु सुकपोल द्विज वज्र द्युति, अधर बिम्बोपमा मधुर हासं। कण्ठदर चिबुक वर वचन गम्भीर तर, सत्य सङ्कल्प सुर त्रास नासं ॥ सुमन सुविचित्र नव तुल-सिकादल युतं, मृदुल वनमाल उर भ्राजमानं।

भ्रमत आमोद वश मत्त मधुकर निकर, मधुर तर मुखर कुर्वन्ति गानं ॥ सुभग श्रीवत्स केयूर कङ्कण हार, किङ्किणी रटनि कटितट रसालं । वामदिशि जनकजासीन सिंहासनं, कनक मृदु बल्लिमिव तरु तमालं ॥ बृहद् भुजदण्ड कोदण्ड मण्डित वामबाहु दक्षिण पाणि बाणमेकं । अखिल मुनि निकर सुर सिद्ध गन्धर्व वर, नमत नर नाग अवनित अनेकं ॥ अनघ अवछिन्न सर्वज्ञ सर्वेश खलु, सर्वतोभद्र दाताऽस्माकं । प्रणत जन खेद विच्छेद विद्या निपुण, नौमि श्रीराम सौमित्र साकं ॥ युगल पद पद्म सुख सद्म पद्मालयं, चिह्न कुलिशादि शोभाति भारी । विमल हनुमन्त हृदि परम मन्दिर सदा, दास तुलसी शरण शोकहारी ॥ ५१ ॥

कोशलाधीश जगदीश जगदेक हित, अमित गुण विपुल विस्तार लीला । गायन्ति तव चरित सुपवित्र श्रुति शेष, शुक शम्भु सनकादि मुनि मनन शीला ॥ वारिचर वपुष धर भक्त निस्तार पर, धरणि कृत नाव महिमाति गुर्वी । सकल यज्ञांशमय

उग्र विग्रह क्रोड, मर्दि दनुजेश उद्धरन उर्वी ॥ कमठ अति विकट तनु कठिन पृष्ठोपरी, भ्रमत मन्दर कण्डु सुख मुरारी । प्रगट कृत अमृत गो इन्दिरा इन्दु वृन्दारका वृन्द आनन्द कारी ॥ मनुज मुनि सिद्ध सुर नाग त्राशक दुष्ट, दनुज द्विजधर्म मर्याद हर्ता । अतुल मृगराज वपु धरित विद्दरित अरि, भक्त प्रहलाद अहलाद कर्ता ॥ छलन बलि कपट वपु रूप बावन ब्रह्म, भुवन पर्यन्त पद तीनि करणं। चरण नख नीर त्रैलोक्य पावन परम, विबुध जननी दुसह शोक हरणं ॥ क्षत्रियाधीश करि निकर वर केसरी, परशुधर विप्र शशि जलद रूपं । बीस भुज-दण्ड दशशीश खण्डन चण्ड,-वेग शायक नौमि रामभूपं ॥ भूमि भर भार हर प्रगट परमातमा, ब्रह्म नररूप धर भक्त हेतू । वृष्णिकुल कुमुद राकेश राधारमण, कंस वंशाटवी धूमकेतू ॥ प्रबल पाखण्ड महिमण्डलाकुल देखि, निन्द्य कृत अखिल मख कर्मजालं । शुद्ध बोधैक घनज्ञान गुणधाम अज, बुद्ध अवतार वन्दे कृपालं ॥ काल कलि जनित

मल मलिन मन सर्व नर, मोह निशि निबिड यम-
नान्धकारं । विष्णुयश पुत्र कल्की दिवाकर उदित,
दास तुलसी हरण विपति भारं ॥ ५२ ॥

सर्व सौभाग्य प्रद सर्वतोभद्र निधि, सर्व सर्वेश सर्वाभिरामं । शर्व हृदि कञ्ज मकरन्द मधुकर रुचिर,-रूप भूपालमणि नौमिरामं ॥ सर्व सुखधाम गुण ग्राम विश्रामप्रद नाम सर्वास्पद माति पुनीतं । निर्मलं शान्त सुविशुद्ध बोधायतन, क्रोध मद हरण करुणा निकेतं ॥ अजित निरुपाधि गोतीत मव्यक्त विभु, मेक मनवद्य मज मद्वितीयं । प्राकृतं प्रगट परमात्मा परमहित, प्रेरकानन्त वन्दे तुरीयं ॥ भूधरं सुन्दरं श्रीवरं मदन मद,-मथन सौन्दर्य सीमाति रम्यं । दुःप्राप्य दुष्प्रेक्ष्य दुस्तर्क्य दुःपार, संसार हर सुछम भाव गम्यं ॥ सत्यकृत सत्यरत सत्यव्रत सर्वदा, पुष्ट सन्तुष्ट सङ्कष्टहारी । धर्म वर्म-णिब्रह्म कर्म बोधैक द्विज,-पूज्य ब्रह्मण्य जन प्रिय मुरारी ॥ नित्य निर्मम नित्य मुक्त निर्मान हरि, ज्ञानघन सच्चिदानन्द मूलं । सर्व रक्षक सर्व भक्षका-

त्र्यक्ष कूटस्थ गूढ़ार्चि भक्तानुकूलं ॥ सिद्ध साधक साध्य वाच्य वाचक रूप, मन्त्र जापक जाप्य सृष्टि स्रष्टा। परम कारण कञ्जनाभ जलदाभ तनु, सगुण निर्गुण सकल दृश्य द्रष्टा ॥ व्योम व्यापक विरज ब्रह्म वर देश वैकुण्ठ वामन विमल ब्रह्मचारी । सिद्ध वृन्दारका वृन्द वन्दित सदा, खण्डि पाखण्ड निर्मूल कारी ॥ पूर्णानन्द सन्दोह अपहरण सम्मोह अज्ञान गुण सन्निपातं । वचन मन कर्म गत शरण तुलसी दास त्रास पाथोधि इव कुम्भजातं ॥ ५३ ॥

विश्व विख्यात विश्वेश विश्वायतन, विश्व मर्याद व्यालारिगामी । ब्रह्म वर देश वागीश व्यापक विमल, विपुल बलवान निर्वाण स्वामी ॥ प्रकृति महतत्व शब्दादि गुण देवता, व्योम मरुदग्नि अमलाम्बु उर्वी । बुद्धि मन इन्द्रिय प्राण चित्तातमा, काल परमाणु चिच्छक्ति गुर्वी ॥ सर्व मेवात्र त्वद्रूप भूपाल मणि व्यक्त मव्यक्त गतभेद विष्णो । भुवन भवदङ्ग कामारि वन्दित पद,-द्वन्द मन्दाकिनी जनक जिष्णो ॥ आदि मध्यान्त भगवन्त त्वं सर्वगत, मीश

पश्यन्ति जे ब्रह्मवादी। यथा पट तन्तु घट मृत्तिका सर्प स्रग, दारु करि कनक कटकाङ्गदादी॥ गूढ गम्भीर गर्वघ्न गूढार्थवित गुप्त गोतीत गुरु ज्ञान ज्ञाता। ज्ञेय ज्ञान प्रिय प्रचुर गरिमागार, घोर संसार पर पार दाता॥ सत्य सङ्कल्प अति कल्प कल्पान्त कृत्त, कल्पनातीत अहितल्प बासी। वनज लोचन बनजनाभ वनदाभ वपु, वनचरध्वज कोटि रूपरासी॥ सुकर दुःकर दुराराध्य दुर्व्यसन हर, दुर्ग दुर्द्धर्ष दुर्गार्ति हर्ता। वेद गर्भार्भकादर्भ गुण गर्व अर्वांग पर गर्व निर्वाप कर्ता॥ भक्त अनु-कूल भव शूल निर्मूल कर, तूल अघ नाम पावक समानं। तरल तृष्णा तमी तरणि धरणी धरण, शरण भय हरण करुणा निधानं॥ बहुल वन्दारु वृन्दारका वृन्द पद,-द्वन्द मन्दार मालोरधारी। पाहि मामीश सन्ताप सङ्कुल सदा, दास तुलसी प्रणत रावणारी॥ ५४॥

सन्त सन्ताप हर विश्व विश्राम कर, राम कामारि अभिराम कारी। शुद्ध बोधायतन सच्चि-

दानन्द घन, सज्जनानन्द वर्द्धन खरारी॥ शील समता भवन विषमता मति शमन, राम सीता रमन रावणारी। खड्ग कर चर्म वर धर्म धर रुचिर कटि,-तूण शर शक्ति शारङ्ग धारी॥ सत्य सन्धान निर्वाणप्रद सर्व हित, सर्वगुण ज्ञान विज्ञान शाली। सघन तम घोर संसार भर शर्वरी, नाम दिवसेश खर किरणमाली॥ तपन तीक्षण तरुण तीव्र तापघ्न तप,-रूप तनु भूप तमपर तपस्वी। मान मद मदन मत्सर मनोरथ मथन, मोह अम्भोधि मन्दर मनस्वी॥ वेद विख्यात वरदेश बामन विरज, विमल वागीश वैकुण्ठ स्वामी। काम क्रोधादि मर्दन विवर्धन छमा, शान्त विग्रह विहँगराज गामी॥ परम पावन पाप पुञ्ज मुञ्जाटवी, अनल इव निमिष निर्मूल कर्ता। भुवन भूषण दूषणारि भुवनेश भू नाथ श्रुतिमाथ जय भुवन भर्ता॥ अमल अविचल अकल सकल सन्तप्त कलि, विकलता भञ्जनानन्द राशी। उरगनायक शयन तरुण पङ्कज नयन, क्षीर सागर अयन सर्ववासी॥ सिद्ध कवि कोविदा-

नन्द दायक पद,-द्वन्द मन्दात्म मनुजैर्दुरापं यत्र सम्भूत अति पूत जल सुरसरी दर्शनादेव अपहरति पापं॥ नित्य निर्मुक्त संयुक्त गुण निर्गुणा,-नन्त भगवन्त न्यामक नियन्ता। विश्व पोषण भरण विश्व कारण करण, शरण तुलसी दास त्रास हन्ता ॥५५॥

दनुजसूदन दयासिन्धु दम्भापहन, दहन दुर्दोष दर्पापहर्ता। दुष्टता दमन दम भवन दुःखौघ हर, दुर्ग दुर्वासना नाश कर्ता॥ भूरि भूषण भानुमन्त भगवन्त भव,-भञ्जना भयद भुवनेश भारी। भावनातीत भव वन्द्य भव भक्त हित, भूमि उद्धरण भूधरण धारी॥ वरद वनदाभ वागीश विश्वातमा, विरज वैकुण्ठ मन्दिर विहारी। व्यापक व्योम वन्द्याङ्घ्रि पावन विभो, ब्रह्म विद्ब्रह्म चिन्तापहारी॥ सहज सुन्दर सुमुख सुमन शुभ सर्वदा, शुद्ध सर्वज्ञ स्वच्छन्दचारी। सर्वकृत सर्वभृत सर्वजित सर्वहित, सत्य सङ्कल्प कल्पान्तकारी॥ नित्य निर्मोह निर्गुण निरञ्जन निजा,-नन्द निर्माण निर्वाण दाता। निर्भरानन्द निःकंप निःसीम निर्मुक्त निरुपाधि निर्मम विधाता॥ महा

मङ्गल मूल मोद महिमायतन, मुग्ध मधु मथन मानद अमानी । मदन मर्दन मदातीत माया रहित, मंजु मा नाथ पाथोज पानी ॥ कमल लोचन कला कोश कोदण्ड धर, कोशलाधीश कल्याण रासी । यातुधान प्रचुर मत्त करि केशरी, भक्त मन पुण्य आरण्य वासी ॥ अनघ अद्वैत अनवद्य अव्यक्त अज, अमित अविकार आनन्द सिन्धो । अचल अनिकेत अविरल, अनामय अनारंभ अम्भोदनादघ्न बन्धो ॥ दास तुलसी खेद खिन्न आपन्न इह, शोक सम्पन्न अतिशय सभीतं । प्रणत पालक राम परम करुणा-धाम, पाहि मा मुर्विपति दुर्विनीतं ॥ ५६ ॥

देहि सतसङ्ग निज अङ्ग श्रीरङ्ग भव,-भङ्ग कारण शरण शोकहारी । येतु भवदङ्घ्रि पल्लव समाश्रित सदा, भक्ति रत विगत संशय मुरारी ॥ असुर सुर नाग नर यक्ष गन्धर्व खग, रजनिचर सिद्ध ये चापि अन्ने । सन्त संसर्ग त्रय वर्ग पर परम पद, प्राय निःप्राप्य गति त्वयि प्रसन्ने ॥ वृत्र बलि बाण

प्रह्लाद भय व्याध गज, गिद्ध द्विजबन्धु निजधर्म त्यागी । साधु पद सलिल निर्धूत कल्मष सकल, श्वपच यवनादि कैवल्य भागी ॥ शान्त निर्पेक्ष निर्मम निरामय अगुण, शब्द ब्रह्मैक पर ब्रह्मज्ञानी । दक्ष सम दृक स्वदृक विगत अति स्वपर मति, परम रति विरति तव चक्रपानी ॥ विश्व उपकार हित व्यग्र चित सर्वदा, त्यक्त मद मन्यु कृत पुण्य रासी । यत्र तिष्ठन्ति तत्रैव अज शर्व हरि, सहित गच्छन्ति क्षीराब्धि बासी ॥ वेद पयसिन्धु सुविचार मन्दर महा, अखिल मुनि वृन्द निर्मथन कर्ता । सार सतसङ्ग मुद्धृत्य इति निश्चितं वदत श्रीकृष्ण वैदर्भि भर्ता ॥ शोक सन्देह भय हर्ष तम तर्ष गण, साधु सद्युक्ति विच्छेदकारी । यथा रघुनाथ शायक निशाचर चमू, निचय निर्दलन पटु वेग भारी ॥ यत्र कुत्रापि मम जन्म निजकर्म वश, भ्रमत जग-योनि सङ्कट अनेकं । तत्र त्वद्भक्ति सज्जन समागम सदा, भवतु मे राम विश्राम मेकं ॥ प्रबल भव जनित त्रयव्याधि भेषज भक्ति, भक्त भैषज्य मद्वैत

दरसी । सन्त भगवन्त अन्तर निरन्तर नहीं, किमपि मति विमल कह दास तुलसी ॥ ५७ ॥

देहि अवलम्ब करकमल कमलारमन, दमन दुख शमन सन्ताप भारी । ग्रसन अज्ञान राकेश विधुन्तुद गर्व काम करि मत्त हरि दूषणारी ॥ वपुष ब्रह्माण्ड सुप्रवृत्ति लङ्का दुर्ग, रचित मन दनुजमय रूप धारी । विविध कोशौघ अति रुचिर मन्दिर निकर, सत्व गुण प्रमुख त्रय कटककारी ॥ कुनप अभिमान सागर भयङ्कर घोर, विपुल अवगाह दुस्तर अपारं । नक्र रागादि सङ्कुल मनोरथ सकल, सङ्ग सङ्कल्प बीची विकारं ॥ मोह दशमौलि तद भ्रात अहँकार पाका-रिजित काम विश्राम हारी । लोभ अतिकाय मत्सर महोदर दुष्ट, क्रोध पापिष्ठ विबुधान्तकारी ॥ द्वेष दुर्मुख दम्भ खर अकम्पन कपट, दर्प मनुजाद मद शूलपानी । अमित बल परम दुर्जय निशाचर निकर, सहित षड्वर्ग गो यातुधानी ॥ जीव भवदङ्घ्रि सेवक विभीषण बसत, मध्य दुष्टाटवी ग्रसित चिन्ता ।

नियम यम सकल सुरलोक लोकेश लङ्केश वश नाथ अत्यन्त भीता ॥ ज्ञान अवधेश गृह गेहिनी भक्ति शुभ, तत्र अवतार भू भार हर्ता । भक्त सङ्कष्ट अवलोक पितु वाक्य कृत, गमन किय गहन वैदेहि भर्ता ॥ मोक्ष साधन अखिल भालु मर्कट विपुल, ज्ञात सुग्रीव कृत जलधि सेतू । प्रबल वैराग्य दारुण प्रभञ्जन तनय, विषय वन भवन मिव धूमकेतू ॥ दुष्ट दनुजेश निर्वंश कृत दास हित, विश्व दुख हरण बोधैक राशी । अनुज निज जानकी सहित हरि सर्वदा, दास तुलसी हृदय कमल वासी ॥ ५८ ॥

दीनउद्धरण रघुवर्य करुणा भवन, शमन सन्ताप पापौघ हारी । विमल विज्ञान विग्रह अनुग्रह रूप, भूप वर विबुध नर्मद खरारी ॥ संसार कान्तार घोर गम्भीर घन, गहन तरु कर्म सङ्कुल मुरारी । वासना वल्लि खर कण्टकाकुल विपुल, निबिड़ विटपाटवी कठिन भारी ॥ विविध चितवृत्ति खग निकर सेनो-लूक, काक बक गिद्ध आमिष अहारी । अखिल

खल निपुण छल छिद्र निरखत सदा, जीव जन पथिक मन खेदकारी ॥ क्रोध करि मत्त मृगराज कन्दर्प मद, दर्प वृक भालु अति उग्रकर्मा । महिष मत्सर क्रूर लोभ शूकर शूर, फेरु छल दम्भ मार्जार धर्मा ॥ कपट मर्कट विकट व्याघ्र पाखण्ड मुख, दुखद मृगव्रात उत्पात कर्ता । हृदय अवलोकि यहशोक शरणागतं, पाहि मा पाहि भो विश्व भर्ता ॥ प्रबल अहँकार दुर्घट महीधर महा,-मोह गिरि गुहा निबि-ड़ान्धकारं । चित्त वेताल मनुजाद मन प्रेतगण, रोग भोगौघ वृश्चिक विकारं ॥ विषय सुख लालसा दंश मशकादि खल, झिल्लि रूपादि सब सर्प स्वामी । तत्र आक्षिप्त तव विषम माया नाथ अन्ध मैं मन्द व्यालादगामी ॥ घोर अवगाह भव आपगा पापजल,-पूर दुष्प्रेक्ष्य दुस्तर अपारा । मकर षड्-वर्ग गो नक्र चक्राकुला, कूल शुभ अशुभ दुख तीव्र धारा ॥ सकल सङ्कट पोच शोच वश सर्वदा, दास तुलसी विषम गहन ग्रस्तं । त्राहि रघुवंश

भूषण कृपाकर कठिन, काल विकराल कालि त्रास त्रस्तं ॥ ५९ ॥

नौमि नारायणं नरं करुणायनं, ध्यान पारायणं ज्ञान मूलं । अखिल संसार उपकार कारण सदय, हृदय तप निरत प्रणतानुकूलं ॥ श्याम नव तामरस दाम दुति वपुष छवि, कोटि मदनार्क अगणित प्रकासं । तरुण रमणीय राजीव लोचन ललित वदन राकेशकर निकर हासं ॥ सकल सौन्दर्य निधि विपुल गुण धाम विधि, वेद बुध शम्भु सेवित अमानं । अरुण पद कञ्ज मकरन्द मन्दाकिनी, मधुप मुनि वृन्द कुर्वन्ति पानं ॥ शक्र प्रेरित घोर मार मद भङ्ग कृत, क्रोधगत बोधरत ब्रह्मचारी । मार्कण्डेय मुनिवर्य हित कौतुकी, बिनहिं कलपान्त प्रभु प्रलयकारी ॥ पुण्य वन शैल सरि वदरिकाश्रम सदा,-सीन पद्मासनं एकरूपं । सिद्ध योगीन्द्र वृन्दा-रकानन्द प्रद, भद्र दायक दरश अति अनूपं ॥ मान मन भङ्ग चित भङ्ग मद क्रोध लोभादि पर्वत

दुर्ग भुवन भर्ता । द्वेष मत्सर राग प्रबल प्रत्यूह प्रति, भूरि निर्दय क्रूर कर्म कर्ता ॥ विकट तर वक्र क्षुर धार प्रमदा तीव्र, दर्प कन्दर्प वर खड्ग धारा । धीर गम्भीर मन पीर कारक तत्र, को वराका वयं विगत सारा ॥ परम दुर्घट पन्थ खल असङ्गत साथ, नाथ नाहिं हाथ वर विरति यष्टी । दर्शनारत दास त्रसित माया पास, त्राहि हरि त्राहि हरि जानि कष्टी ॥ दास तुलसी दीन धर्म सम्बल हीन, श्रमित अति खेद मति मोह नासी । देहि अवलम्ब न विलम्ब अम्भोजकर, चक्रधर तेज बल सर्म रासी ॥ ६० ॥

सकल सुखकन्द आनन्द वन पुण्य कृत, विन्दु-माधव द्वन्द विपति हारी । यस्याङ्घ्रि पाथोज अज शम्भु सनकादि, शेष मुनि वृन्द अलि निलयकारी ॥ अमल मर्कत श्याम काम शतकोटि छबि, पीतपट तड़ित इव जलद नीलं । अरुण शतपत्र लोचन विलोकनि चारु, प्रणत जन सुखद करुणाब्धि शीलं ॥ काल गजराज मृगराज दनुजेश बन,

दहनं पावक मोह निशि दिनेशं । चारि भुज चक्र
कौमोदकी जलज दर, सरसिजोपरि यथा राजहंसं॥
मुकुट कुण्डल तिलक अलक अलि व्रात इव, भृकुटि
द्विज अधर वर रु चारु नासा । रुचिर सुकपोल द
ग्रीव सुख सींव हरि, इन्दुकर कुन्द मिव मधुर हासा॥
उरसि वनमाल सुविशाल नव मञ्जरी, भ्राज श्रीवत्स
लाञ्छन सुदारं । परम ब्रह्मण्य अतिधन्य गतमन्यु
अज, अमित बल विपुल महिमा अपारं ॥ हा
केयूर कर कनक कङ्कण रतन, जटित मणि मेखल
कटि प्रदेशं । युगल पद नूपुरा मुखर कल हंसवत
सुभग सर्वाङ्ग सौन्दर्य वेशं ॥ सकल सौभाग्य संयुत
त्रैलोक्य श्री, दक्ष दिशि रुचिर वारीश कन्या।
बसत विबुधापगा निकट तट सदन वर, नयन नि
खन्ति नर ते ति धन्या ॥ अखिल मङ्गल भव
निबिड़ संशय शमन, दमन व्रजनाटवी कष्ट हर्ता
विश्वधृत विश्वहित अजित गोतीत शिव, वि
पालन हरण विश्व कर्ता ॥ ज्ञान विज्ञान वैराग्य
ऐश्वर्य निधि, सिद्धि अणिमादि दे भूरि दानं । ग्रस

भव व्याल अति त्रास तुलसीदास, त्राहि श्रीराम उरगारि यानं ॥ ६१ ॥

राग आसावरी।

इहै परम फल परम बड़ाई। नख शिख रुचिर बिन्दु माधव छबि, निरखहिं नयन अघाई ॥ विशद किशोर पीन सुन्दर वपु, श्याम सुरुचि अधिकाई। नीलकञ्ज वारिद तमाल मणि, इन्ह तनु ते दुति पाई ॥ मृदुल चरण शुभ चिह्न पदज नख, अति अद्भुत उपमाई। अरुण नील पाथोज प्रसव जनु, मणियुत दल समुदाई ॥ जातरूप मणि जटित मनोहर, नूपुर जन सुखदाई। जनु हर उर हरि विविध रूप धरि, रहे वर भवन बनाई ॥ कटितट रटति चारु किङ्किणि रव, अनुपम वरणि न जाई हेम जलज कल कलिन मध्य जनु, मधुकर मुखर सुहाई ॥ उर विशाल भृगु चरण चारु अति, सूचत कोमलताई। कङ्कण चारु विविध भूषण विधि, रचि निज कर मन लाई ॥ गज मणि माल बीच भ्राजत कहि, जाति न पदिक निकाई। जनु उडुगण

मण्डल वारिद पर, नवग्रह रची अथाई ॥ भुज भोग भुजदण्ड कञ्ज दर, चक्र गदा बनि आई। शोभा सीव ग्रीव चिबुकाधर, वदन अमित छवि छाई ॥ कुलिश कुन्द कुड्मल दामिनि द्युति, दशनन्ह देखि लजाई। नासा नयन कपोल ललित श्रुति, कुण्डल भ्रू मोहि भाई ॥ कुञ्चित कच शिर मुकुट भाल पर, तिलक कहौं समुझाई। अल तड़ित युग रेख इन्दु महँ, रहि तजि चञ्चलताई ॥ निर्मल पीत दुकूल अनूपम, उपमा हिय न समाई। बहु मणियुत गिरि नील शिखर पर, कनक बसन रुचिराई ॥ दक्ष भाग अनुराग सहित इन्दिरा अधिक ललिताई। हेम लता जनु तरु तमाल ढिग, नील निचोल ओढ़ाई ॥ शत शारदा शेष श्रुति मिलिके, शोभा कहि न सिराई। तुलसिदास मति मन्द द्वन्द रत, कहै कवनि विधि गाई ॥ ६२ ॥

राग जयतिश्री।

मन इतनोई है या तनुको परमफल। नखशि

शुभग बिन्दुमाधव छबि, तजि सुभाव अवलोकु एक पल ॥ तरुण अरुण अम्भोज चरण मृदु, नख द्युति हृदयतिमिर हारी । कुलिश केतु जव जलज रेखवर, अङ्कुश मनगज वशकारी ॥ कनक जटित मणि नूपुर मेखल, कटितट रटति मधुर वानी । त्रिवली उदर गँभीर नाभिसर, जहँ उपजे विरञ्चि ज्ञानी ॥ उर वनमाल पदिक अति शोभित, विप्र-चरण चितकहँ करषै । श्याम तामरस दाम वरण वपु, पीत बसन शोभा वरषै ॥ करकङ्कण केयूर मनोहर, देति मोद मुद्रिक न्यारी । गदा कञ्ज दर चारु चक्र धर, नाग शुण्ड सम भुजचारी ॥ कम्बु ग्रीव छबि सीव चिबुक द्विज, अधर अरुण उन्नत नासा । नव राजीव नयन शशि आनन, सेवक सुखद विशद हासा ॥ रुचिर कपोल श्रवण कुण्डल शिर, मुकुट सुतिलक भाल भ्राजै । ललित भृकुटि सुन्दर चितवनि कच, निरखि मधुप अवली लाजै ॥ रूप शील गुण खानि दक्षदिशि, सिन्धुसुता रत पद सेवा । जाकी कृपा कटाक्ष चहत शिव,

विधि मुनि मनुज दनुज देवा ॥ तुलसिदास भव-त्रास मिटै तब, जब मति एहि सरूप अटकै । नाहिंत दीन मलीन हीनसुख, कोटि जनम भ्रमि भ्रमि भटकै ॥ ६३ ॥

राग वसन्त ।

बन्दौं रघुपति करुणानिधान । जाते छूटै भव-भेद ज्ञान ॥ रघुबंश कुमुद सुखप्रद निशेश । सेवित पदपङ्कज अज महेश ॥ निजभक्त हृदय पाथोज भृङ्ग । लावण्य वपुष अगणित अनङ्ग ॥ अति-प्रबल मोहतम मारतण्ड । अज्ञान गहन पावक-प्रचण्ड ॥ अभिमानसिन्धु कुम्भजउदार । सुररञ्जन भञ्जन भूमिभार ॥ रागादि सर्पगण पन्नगारि । कन्दर्प-नाग मृगपति मुरारि ॥ भव जलधिपोत चरणार-विन्द । जानकी रमण आनन्दकन्द ॥ हनुमन्तप्रेम वापी मराल । निष्काम कामधुकगो दयाल ॥ त्रैलोक्य तिलक गुण गहन राम । कह तुलसिदास विश्राम धाम ॥ ६४ ॥

राग भैरव।

राम राम रमु रांम राम राम रटु, राम राम जपु जीहा। रामनाम नव नेह मेहको, मन हठि होइ पपीहा॥ सबसाधन फल कूप सरित सर, सागर सलिल निरासा। रामनाम रति स्वाति सुधा शुभ, सीकर प्रेम पियासा॥ गरजि तरजि पाषाण बरषि पवि, प्रीति परखि जियजानै। अधिक अधिक अनुराग उमग उर, पन परमिति पहिचानै॥ रामनाम गति राम-नाम मति, रामनाम अनुरागी। ह्वैगे हैं जे ह्वैहैं आगे, ते त्रिभुवन बड़भागी॥ एक अङ्क मग अगम गवनकरि, विलम न छिनछिन छाहैं। तुलसी हित अपनो अपनीदिशि, निरुपाधि नेम निबाहैं॥ ६५॥

रामजपु रामजपु रामजपु बावरे। घोर भव नीरनिधि नाम निज नावरे॥ एकहि साधन सब रिधिसिधि साधिरे। ग्रसे कलिरोग योग संयम समाधिरे॥ भलो जो हैं पोच जो है दाहिनो जो वामरे। राम नामहीसों अन्त सबहीको कामरे॥

जग नभवाटिका रहीहै फलि फूलिरे। धुवाँ कैसो धौरहर देखि तूँ न भूलिरे॥ रामनाम छाडि जो भरोसो करै औररे। तुलसी परोसो त्यागि मागै कूर कौररे॥ ६६॥

रामनाम जपुजीव सदा सानुरागरे। कलि न विराग योग याग तप त्यागरे॥ राम सुमिरन सब विधिहीको राजरे। रामको विसारिबो निषेध शिरताजरे॥ रामनाम महामणि फणि जग जालरे। मणि लिये फणि जिए व्याकुल बिहालरे॥ रामनाम कामतरु देत फलचारिरे। कहत पुराण वेद पण्डित पुरारिरे॥ रामनाम प्रेम परमारथको सार रे। रामनाम तुलसीको जीवन अधाररे॥ ६७॥

राम राम राम जीव जौं लौं तूँ न जपिहै। तौ लौं जहँ जैहै तहँ तिहूँ ताप तपिहै॥ सुरसरि तीर बिनुनीर दुख पाइहै। सुरतरु तरे तोहिं दारिद सताइहै॥ जागत वागत सपने न सुख सोइहै। जनमिजनमि युगयुग जग रोइहै॥ छूटिबेके यतन विशे

बाँध्यो जायगो । ह्वैहै विष भोजन जो सुधासानि खायगो ॥ तुलसी तिलोक तिहुँकाल तोसे दीनको । राम नामहीकी गति जैसे जल मीनको ॥ ६८ ॥

सुमिरु सनेहसों तूँ नाम राम रायको । सम्बल निसम्बलीको सखा असहायको ॥ भागहै अभागेहूको गुण गुणहीनको । गाहक गरीबको दयालदानि दीनको ॥ कुल अकुलीनको ॥ सुन्योहै वेद साखि है । पाँगुरको हाथपाँय आँधरेको आँखिहै ॥ माय-बाप भूखेको अधार निराधारको । सेतु भवसागरको हेतु सुखसागरको ॥ पतित पावन राम नामसो न दूसरो । सुमिरि सुभूमि भयो तुलसीसो ऊसरो॥६९॥

भलो भलीभांतिहै जो मेरे कहे लागि है । मन राम नामसों सुभाय अनुरागि है ॥ राम नामको प्रभाव जानि जूडी आगि है । सहित सहाय कलि-काल भीरु भागिहै ॥ राग राम नामसों विराग योग जागिहै । वामाविधि भाल न करमदाग दागिहै ॥ रामनाम मोदक सनेह सुधा पागिहै । पाइ परितोष

तूँ न द्वारद्वार बागिहै ॥ रामनाम कामतरु जोइ जोइ माँगिहै । तुलसी स्वारथ परमारथ न खाँगि है ॥ ७० ॥

ऐसेहू साहबकी सेवासों होत चोररे । आपनी न बूझि न कहेको राँड रोररे ॥ मुनि मन अगम सुगम माइ बापसों । कृपासिन्धु सहज सखा सनेही आपसों ॥ लोक वेद विदित बडो न रघुनाथसों । सब दिन सब देश सबहीके साथसों ॥ स्वामी सर-वज्ञसों चलै न चोरी चारकी । प्रीति पहिचान यह रीति दरबारकी ॥ काय न कलेश लेश लेत मानि मनकी । सुमिरे सकुचि रुचि जोगवत जनकी ॥ रीझे वश होत खीझे देत निज धामरे । फलत सकल फल कामतरु नामरे ॥ बेंचे खोटे दाम न मिलै न राखे कामरे । सोऊ तुलसी निवाज्यो ऐसे राजा रामरे ॥ ७१ ॥

मेरो भलो कियो राम आपनी भलाई । हौं तो सांइ द्रोही पै सेवक हित सांई ॥ राम सों बडो है

कौन मोसो कौन छोटो । राम सों खरो है कौन मोसे कौन खोटो ॥ लोक कहै रामको गुलाम हौं कहाओं । एतो बडो अपराध भौ न मन बाओं ॥ पाथ माथे चढै तृण तुलसी ज्यों नीचो । बोरत न वारि ताहि जानि आपु सींचो ॥ ७२ ॥

जागु जागु जीव जड जो है जग यामिनि । देह गेह नेह जानि जैसे घन दामिनि ॥ सोये सपनेको सहै संसृति सन्तापरे । बूडो मृग वारि खायो जेंवरी को सांपरे ॥ कहैं वेद बुध तूं तो बूझ मन मांहिरे । दोष दुख सपनेको जागेही पै जाहिं रे ॥ तुलसी जागे ते जाय तिहूं ताप तायरे । राम नाम शुचि रुचि सहज सुभायरे ॥ ७३ ॥

राग विभास ।

जानकीशकी कृपा जगावती सुजान जीव, जागि त्यागि मूढतानुराग श्रीहरे । करि विचार तजि विकार भजि उदार रामचन्द्र, भद्र सिन्धु दीनबन्धु वेद वदतरे ॥ मोह मय कुहू निशा विशाल

काल विपुल व्याल, खोये सो अनूप रूप स्वप्न ज्यों परे । अब प्रभात प्रगट ज्ञान भानुके प्रकाश त्रास, नाश राग मोह द्वेष निबिड तम टरे ॥ भागे मद मान चोर भोर जानि यातुधान, काम क्रोध लोभ छोभ निकर अपडरे । देखत रघुवर प्रताप बीते सन्ताप पाप, ताप त्रिविध प्रेम आप दूरही करे ॥ श्रवण सुनि गिरा गँभीर जागे अति धीर वीर, वर विराग तोष सकल सन्त आदरे । तुलसिदास प्रभु कृपाल निरखि जीव जन विहाल, भंज्यो भवजाल परम मङ्गलाचरे ॥ ७४ ॥

राग ललित ।

खोटो खरो रावरो हौं रावरी सौं रावरेसों, झूठ क्यों कहौंगो जानो सबहीके मनकी । कर्मरे वचन हिये कहौं न कपट किये, ऐसी हठ जैसी गांठि पानी परे सनकी ॥ दूसरो भरोसो नाहिं वासना उपासनाकी, वासव विरञ्चि सुर नर मुनि गनकी । स्वारथके साथी मेरे हाथी श्वान लेवा देई, काहू तो न

पीर रघुवीर दीन जनकी ॥ सांप सभा साबर लबार भये देव दिव्य, दुसह सांसति कीजे आगे है या तनकी। सांचो परे पाऊँ पान पञ्चमें परे प्रमाण, तुलसी चातक आश राम श्याम घनकी ॥ ७८ ॥

रामको गुलाम नाम रामबोला राख्यो राम, काम यहै नाम द्वै हौं कबहूं कहत हौं। रोटी लूगा नीके राखे आगेहूकी वेद भाखे, भलो ह्वै है तेरो ताते आनद लहत हौं ॥ बांध्यो हौं करम जड़ गरब निगड़ गूढ़, सुनत दुसह हौं तो सांसति सहत हौं। आरत अनाथ नाथ कोशलपाल कृपाल, लीन्हों छीनि दीन देख्यो दुरित दहत हौं ॥ बूझ्यो ज्योंहीं कह्यो मैं हूं चेरो ह्वैहौं रावरो जू, मेरे कोऊ कहूं नाहिं चरण गहत हौं। मींजो गुर पीठ अपनाइ गहि बांह बोलि, सेवक सुखद सदा विरद बहत हौं ॥ लोग कहैं पोच सो न सोच न संकोच मेरे, व्याह न बरेखी जाति पांति न चहत हौं। तुलसी अकाज काज रामहींके खीझे रीझे, प्रीति की प्रतीति मन मुदित रहत हौं ॥ ७६ ॥

जानकीजीवन जगजीवन जगतहित, जगदीश रघुनाथ राजिव लोचन राम। वदन शरदविधु सुख शील श्रीसदन, सहज सुन्दर तनु शोभा अगणित काम॥ जगत सुपिता मातु सुगुरु सुहित मीत, सबको दाहिनो दीनबन्धु काहूको न वाम। आरत हरण शरणद अतुलित दानि, प्रणत पाल कृपाल पतित पावन नाम॥ वन्दित सकल विश्व सेवित सकल सुर, आगम निगम कहैं रावरेई गुणग्राम। इहै जानि तुलसी तिहारो जन भयो चहै, न्यारोकै गनिबो जहां गने गरीब गुलाम॥ ७७॥

राग टोड़ी।

दीनको दयालु दानि, दूसरो न कोऊ। जासो दीनता कहों मैं, देखों दीन सोऊ॥ सुर मुनि नर नाग असुर, साहब तौ घनेरे। तौलों जौलों रावरे न, नेकु नयन फेरे॥ त्रिभुवन तिहुँकाल विदित, वदत वेद चारी। आदि मध्य अन्त राम, साहबी तिहारी॥ तुमहिं मांगि मांगनो न, मांगनो कहायो। सुनि

सुभाव शील सुयश, याचन जन आयो ॥ पाहन पशु व्याध विहँग, अपने करि लीन्हे । महाराज दशरथके, रङ्क राय कीन्हे ॥ तू गरीबको निवाज हौं गरीब तेरो । बारक कहिये कृपाल, तुलसिदास मेरो ॥ ७८ ॥

तूँ दयालु दीन हौं तूँ, दानि हौं भिखारी । हौं प्रसिद्ध पातकी तूँ, पाप पुञ्ज हारी ॥ नाथ तूँ अनाथको, अनाथ कौन मोसों । मो समान आरत नाहिं, आरतिहर तोसों ॥ ब्रह्म तूँ हौं जीव तूँ हौं ठाकुर हौं चेरो । तात मात गुरु सखा तूँ, सबविधि हितमेरो ॥ तोहि मोहि नाते अनेक, मानिये जु भावै । ज्यों त्यों तुलसी कृपाल, चरण शरण पावै ॥ ७९ ॥

और काहि मांगियेको मांगिबो निवारै । अभिमत दातार कौन, दुख दरिद्र दारै ॥ धर्म धाम राम काम, कोटि रूप रूरो । साहब सब विधि सुजान, दान खड्ग शूरो ॥ सुसमय दिन द्वै निशान, सबके द्वार बाजै । कुसमय दशरथके दानि, तैं गरीब निवाजै ॥ सेवा

बिनु गुण विहीन, दीनता सुनाये । जे जे तैं निहाल किये, फूले फिरत पाये ॥ तुलसिदास याँचत रुचि जानि दान दीजे । रामचन्द्र चन्दतूँ चकोर मोहि कीजे ॥ ८० ॥

दीनबन्धु सुखसिन्धु कृपाकर, कारुणीक रघुराई । सुनहु नाथ मन जरत त्रिविध ज्वर, करत फिरत बौराई ॥ कबहु योग रत भोग निरत सठ हठि वियोग वश होई । कबहुँ मोह वश द्रोह करत बहु; कबहु दया अति सोई ॥ कबहु दीन मति हीन रङ्कतर, कबहु भूप अभिमानी । कबहु मूढ़ पण्डित विडम्ब रत, कबहु धरम रत ज्ञानी ॥ कबहु देख जग धनमय रिपुमय, कबहु नारिमय भासै । संसृति सन्निपात दारुण दुख, बिनु हरि कृपा न नासै ॥ संयम जप तप नेम धरम व्रत, बहु भेषज समुदाई । तुलसिदास भवरोग रामपद,-प्रेम हीन नहिं जाइ॥८१

मोह जनित मल लाग विविध विधि, कोटिहु यतन न जाई । जनम जनम अभ्यास निरत चित

अधिक २ लपटाई ॥ नयन मलिन पर नारि निरखि मन,-मलिन विषय सँग लागे । हृदय मलिन वासना मान मद, जीव सहज सुख त्यागे ॥ पर-निन्दा सुनि श्रवन मलिन भये, वचन दोष पर गाये । सबप्रकार मलभार लाग निज,-नाथ चरण विसराये ॥ तुलसिदास व्रत दान ज्ञान तप, शुद्धि हेतु श्रुतिगावे । रामचरण अनुराग नीर विनु, मल अति नाश न पावै ॥ ८२ ॥

राग जयतिश्री ।

कछु है न आय गयो जन्म जाय । अति दुर्लभ तनु पाइ कपट तजि, भजे न राम मन वचन काय ॥ लरिकाई बीती अचेत चित, चञ्चलता चौगुनी चाय । यौवन ज्वर युवती कुपथ्य करि, भयो त्रिदोष भरि मदन वाय ॥ मध्य वयस धन हेतु गँवाई, कृषी वनिज नाना उपाय । राम विमुख सुख लह्यो न सपनेहुँ, निशि वासर तयो तिहूँ ताय ॥ सेये नाहिं सीतापति सेवक, साधु सुमति

भलि भगति भाय । सुने न पुलकि तनु कहे
मुदित मन, किय जो चरित रघुवंश राय ॥ अ
सोचत मणि बिनु भुजङ्ग ज्यों, विकल अङ्ग दल
जरा घाय । शिर धुनि धुनि पछतात मींजिक
कोउ न मीत हित दुसह दाय ॥ जिन लगि नि
परलोक बिगारचो, ते लजात होत ठाढ़े ठांय
तुलसी अजहुँ सुमिरु रघुनाथहि, तरचो गयन
जाके एक नाय ॥ ८३ ॥

तूँ पछतैहै मन मींजि हाथ । भयो सुगम तो
अमर अगम तनु, समुझ न कत खोवत अकाथ
सुख साधन हरि विमुख वृथा जस, श्रम फल घृ
हित मथे पाथ । यह बिचारि तजि कुपथ कुसङ्गा
चलु सुपन्थ मिलि भले साथ ॥ देखु राम, सेव
सुनि कीरति, रटहि नाम करि गान गाथ । हृद
आनु धनु बान पानि प्रभु, लसे मुनिपट कटि क
भाथ ॥ तुलसिदास परिहरि प्रपञ्च सब, नाउ राम
पद कमल माथ । जनि डरपहि तोसे अनेक खल
अपनाये जानकीनाथ ॥ ८४ ॥

राग धनाश्री ।

मन माधवको नेकु निहारहि । सुनु सठ सदा रङ्कके धन ज्यों, छिन छिन प्रभुहि सँभारहि ॥ शोभा शील ज्ञान गुण मन्दिर, सुन्दर परम उदारहि । रञ्जन सन्त अखिल अघ गञ्जन, भञ्जन विषय विकारहि ॥ जो बिनु योग यज्ञ ब्रत संयम, गयो चहहि भव पारहि । तौ जनि तुलसिदास निशि वासर, हरि पद कमल बिसारहि ॥ ८५ ॥

इहै कह्यो सुत वेद चहूँ । श्री रघुवीर चरण चिन्तन तजि, नाहिंन ठौर कहूँ ॥ जाके चरण विरञ्चि सेइ सिधि, पाई शङ्करहूँ । शुक सनकादि मुक्त विचरत तेउ, भजन करत अजहूँ ॥ यद्यपि परम चपल श्री सन्तत, थिर न रहति कतहूँ । हरि पद पङ्कज पाइ अचल भइ, करम वचन मनहूँ ॥ करुणा सिन्धु भक्त चिन्तामणि, शोभा सेवतहूँ । और सकल सुर असुर ईश सब, खाये उरग छहूँ ॥ सुरुचि कह्यो सो सत्य तात अति,-पुरुष वचन

जबहूँ । तुलसिदास रघुनाथ विमुख नाहिं, मिटि विपति कबहूँ ॥ ८६ ॥

सुनु मन मूढ सिखावन मेरो। हरि पद विमु न लह्यो काहु सुख, सठ यह समुझ सबेरो ॥ बिछु शशि रवि मन नयनन ते, पावत दुख बहुतेरो भ्रमत श्रमित निशि दिवस गगन महँ, तहँ रि राहु बड़ेरो ॥ यद्यपि अति पुनीत सुरसरिता, तिहुँ पर सुयश घनेरो । तजे चरण अजहूँ न मिट नित, बहिबो ताहू केरो ॥ मिटै न विपति भ बिनु रघुपति, श्रुति सन्देह निबेरो । तुलसिदा सब आश छाड़िके, होहु राम कर चेरो ॥ ८७

कबहूँ मन विश्राम न मान्यो। निशि दिन भ्रम बिसारि सहज सुख, जहँ तहँ इन्द्रिन्ह तान्यो यदपि विषय सँग सहे दुसह दुख, विषम जा अरुझान्यो । तदपि न तजत मूढ़ ममता व जानतहू नहिं जान्यो ॥ जन्म अनेक किये ना विधि, करम कीच चित सान्यो । होइ न विम

विवेक नीर बिनु, बेद पुराण बखान्यो ॥ निज हित नाथ पिता गुरु हरिसों, हरषि हृदय नहिं आन्यो। तुलसिदास कब तृषा जाइ सर,-खनतहि जनम सिरान्यो ॥ ८८ ॥

मेरो मन हरिजू हठ न तजै। निशि दिन नाथ देउँ सिख बहु विधि, करत सुभाउ निजै ॥ ज्यों युवती अनुभवति प्रसव अति,-दारुण दुख उपजै। है अनुकूल बिसारि शूल सठ, पुनि खलु पतिहि भजै ॥ लोलुप भ्रमत गृहप ज्यों जहँ तहँ, शिर पदत्राण बजै। तदपि अधम विचरत तेहि मारग, कबहुँ न मूढ़ लजै ॥ हौं हारचों करि यतन विविध विधि, अतिशय प्रबल अजै। तुलसिदास वश होइ तबहि जब, प्रेरक प्रभु बरजै ॥ ८९ ॥

ऐसी मूढ़ता या मनकी। परिहरि रामभगति सुरसरिता, आश करत ओस कनकी ॥ धूम समूह निरखि चातक ज्यों तृषित जानि मति घनकी। नहिं तहँ शीतलता न पानि पुनि, हानि होत

लोचनकी ॥ ज्यों गच कांच विलोकि श्येन जड़
छाँह आपने तनकी । टूटत अति आतुर अहा
वश, छत बिसारि आननकी ॥ कहँ लगि कह
कुचाल कृपानिधि, जानत हौ गति जनकी । तुल
सिदास प्रभु हरहु दुसह दुख, करहु लाज नि
पनकी ॥ ९० ॥

नाचतही निशि दिवस मरचो । तबही ते
भयो हरि थिर, जबते जिव नाम धरचो ॥ ब
बासना विविध कंचुक, भूषण लोभादि भरचो
चर अरु अचर गगन जल थल में, कवन न स्वाँ
करचो ॥ देव दनुज मुनि नाग मनुज नहिं, याँच
कोउ उबरचो । मेरो दुसह दरिद्र दोष दुख
काहू तौ न हरचो ॥ थके नयन पद पानि सुमति
बल, सङ्ग सकल बिछुरचो । अब रघुनाथ शरण
आयो जन, भव भय विकल डरचो ॥ जेहि गु
ते वश होहु रीझि कर, सो मोहि सब बिसरचो
तुलसिदास निज भवन द्वार प्रभु, दीजे रह
परचो ॥ ९१ ॥

माधव मो सम मन्द न कोऊ। यद्यपि मीन पतङ्ग हीन मति, मोहि न पूजै ओऊ॥ रुचिर रूप आहार वश्य उन, पावक लोह न जान्यो। देखत विपति विषय न तजत हौं, ताते अधिक अयान्यो॥ महा मोह सरिता अपार महँ, सन्तत फिरत बह्यो। श्रीहरि चरण कमल नौका तजि, फिरि फिरि फेन गह्यो॥ अस्थि पुरातन छुधित श्वान अति, ज्यौं भरि मुख पकरै। निज तालू गत रुधिर पान करि, मन सन्तोष धरै॥ परम कठिन भव व्याल ग्रसित हौं, त्रसित भयों अतिभारी। चाहत अभय भेक शरणागत, खगपति नाथ विसारी॥ जलचर वृन्द जाल अन्तर्गत, होत समिटि इक पासा। एकहि एक खात लालच वश, नहि देखत निज नासा॥ मेरे अघ शारद अनेक युग, गनत पार नहिं पावै। तुलसीदास पतित पावन प्रभु, यह भरोस जिय आवै॥ ९२॥

कृपा सो कहा बिसारी राम। जेहि करुणा सुनि श्रवण दीन दुख, धावत हौ तजि धाम॥ नागराज

निज बल विचारि हिय, हारि चरण चित दीन्ह
आरत गिरा सुनत खगपति तजि, चलत बिलम्
न कीन्ह ॥ दिति सुत त्रास त्रासित निशि दि
प्रह्लाद प्रतिज्ञा राखी । अतुलित बल मृगरा
मनुज तनु, दनुज हत्यो श्रुति साखी ॥ भूप सदा
नृप बल विलोकि प्रभु, राखु कह्यो नरनारी । वस
पूरि अरि दर्प दूर करि, भूरि कृपा दनुजारी ॥ ए
एक रिपु ते त्रासित जन, तुम राखे रघुवीर । अ
मोहिं देत दुसह दुख बहु रिपु, कस न हरहु भ
भीर ॥ लोभ ग्राह दनुजेश क्रोध कुरु,-राज बन्धु ख
मार । तुलसिदास प्रभु यह दारुण दुख, भञ्जहु रा
उदार ॥ ९३ ॥

काहे ते हरि मोहि बिसारो । जानत नि
महिमा मेरे अघ, तदपि न नाथ सँभारो ॥ पति
पुनीत दीन हित अशरण,-शरण कहत श्रुति चारो
हौं नाहिं अधम सभीत दीन किधों, वेदन मृ
पुकारो ॥ खग गनिका गज व्याध पांति जहँ, त

हौंहूं बैठारो । अब केहि लाज कृपानिधान परसत पनवारो फारो ॥ जो कलिकाल प्रबल होतो अति, तुव निदेश ते न्यारो । तौ हरि रोस भरोस दोष गुण, तेहि भजते तजि गारो ॥ मसक विरञ्चि विरञ्चि मसक सम, करहु प्रभाव तिहारो । यह सामर्थ अछत मोहि त्यागहु, नाथ तहां कछु चारो ॥ नाहि न नरक परत मोकहँ डर, यद्यपि हौं अति हारो । यह बडि त्रास दास तुलसी प्रभु, नामहु पाप न जारो ॥ ९४ ॥

तौ न मोर अघ अवगुण गनि हैं । जौ यमराज काज सब परिहरि यहै ख्याल उर आनि हैं ॥ चलि हैं छूटि पुञ्ज पापिनके, असमञ्जस जिय जानि हैं । देखि खलल अधिकार सुप्रभु सों, भूरि भलाई भानि हैं ॥ हँसि करि हैं परतीति भक्तिकी, भक्त शिरोमणि मनि हैं । ज्यों त्यों तुलसिदास कोशलपति, अपनायहि परि बनि हैं ॥ ९५ ॥

जो जिय धरिहौ अवगुण जनके । तौ क्यों

कृत सुकृत नख ते मोपै, विपुल वृन्द अघ वनके। कहिहै कवन कलुष मेरे कृत, करम वचन अ मनके। हारहिं अमित शेष शारद श्रुति, गिनत ए इक छनके॥ जो चित चढ़ै नाम महिमा निज,-गु गण पावन पनके। तौ तुलसिहि तारिहौ विप्रज्यो दशन तोरि यमगनके॥ १६॥

जौ हरि जनके अवगुण गहते। तौ सुरप कुरुराज बालि सों, कत हठि बैर बिसहते॥ जप याग योग व्रत वर्जित, केवल प्रेम न चहते तौ कत सुर मुनिवर विहाय ब्रज, गोपि गेह ब रहते॥ जो जहँ तहँ प्रण राखि भक्तको, भज प्रभाव न कहते। तौ कलि कठिन करम मार जड़ हम केहि भाँति निबहते॥ जो सुत हित लि नाम अजामिल,-के अघ अमित न दहते। तौ य भट सासति हर हमसे, वृषभ खोजि कर नहते जो जग विदित पतित पावन अति, बाँकुर बिर न वहते। तौ बहु कल्प कुटिल तुलसी से, सपने सुगति न लहते॥ १७॥

अस हरि करत दास पर प्रीति। निज प्रभुता बिसारि जनके वश, होत सदा यह रीति॥ जिन बाँधे सुर असुर नाग नर, प्रबल करमकी डोरी। सोइ अविछिन्न ब्रह्म यशुमति हठि,-बाँध्यो सकत न छोरी॥ जाकी माया वश विरञ्चि शिव, नाचत पार न पायो। करतल ताल बजाइ ग्वाल युवतिन्ह सोइ नाथ नचायो॥ विश्वम्भर श्रीपति त्रिभुवन पति, वेद विदित यह लीख। बलि सों कछु न चली प्रभुता बरु, है द्विज माँगी भीख॥ जाको नाम लिये छूटत भव, जनम मरण दुख भार। अम्बरीष हित लागि कृपानिधि, सो जनम्यो दशबार॥ योग विराग ध्यान जप तप करि, जेहि खोजत मुनि ज्ञानी। वानर भालु चपल पशु पाँवर, नाथ तहाँ रति मानी॥ लोकपाल यम काल पवन रवि,-शशि सब आज्ञाकारी। तुलसिदास प्रभु उग्रसेनके, द्वार वेंत कर धारी॥ ९८॥

बिरद गरीब निवाज रामको। गावत वेद पुराण शम्भु शुक, प्रगट प्रभाव नामको॥ ध्रुव प्रह्लाद

विभीषण कपि यदुपति पाण्डव सुदामको । ले
सुयश परलोक सुगति इन,-में कौहै राम कामको
गनिका कोल किरात आदिकवि, इन्हते अधि
वामको । वाजिमेध कब कियो अजामिल, गज ग
कब शामको ॥ छली मलीन हीन सबही अँ
तुलसी सो छिन छामको । नाम नरेश प्रताप प्र
जग, युगयुग चालत चामको ॥ ९९ ॥

सुनत सीतापति शील सुभाउ । मोद न
तन पुलक नयन जल, सो नर खेहर खाउ ॥ शि
पनते पितु मातु बन्धु गुरु, सेवक सचिव सखा
कहत राम विधु वदन रिसौहें, सपनेहु लख्यो
काउ ॥ खेलत सङ्ग अनुज बालक नित, जोग
अनट अपाउ । जीति हारि चुचुकारि दुलारत,
दिवावत दाउ ॥ शिला शाप सन्ताप विगत भ
परसत पावन पाउ । दई सुगति सो न हेरि ह
हिय, चरण छुये को पछताउ ॥ भव धनु भ
निदरि भूपति भृगुनाथ खाइ गे ताउ । छमि अपरा

छमाय पाँय परि, इतो न अनत समाउ ॥ कह्यो राज बन दियो नारि बश, गरि गलानि गये राउ । ता कुमातुको मन जोगवत ज्यों, निज तन मरम कुघाउ ॥ कपि सेवा बश भये कनौड़े कह्यो पवन सुत आउ । देबेको न कछू रिनियाँ हौं धनिक तु पत्र लिखाउ ॥ अपनाये सुग्रीव विभीषण, तिन न तज्यो छल छाउ । भरत सभा सनमानि सराहत, होत न हृदय अघाउ ॥ निज करुणा करतूति भगत पर, चपत चलत चरचाउ । सकृत प्रणाम प्रणत यश बरणत, सुनत कहत फिर गाउ ॥ समुझि समुझि गुण ग्राम रामके, उर अनुराग बढ़ाउ । तुलसिदास अनयास राम पद, पइहै प्रेम पसाउ ॥ १०० ॥

जाउँ कहाँ तजि चरण तिहारे । काको नाम पतित पावन जग, केहि अति दीन पियारे ॥ कवन देव बरियाइ बिरद हित, हठि हठि अधम उधारे । खग मृग व्याध पखान विटप जड़ यवन कवन सुर तारे ॥ देव दनुज मुनि नाग मनुज सब, माया

विवश विचारे । तिनके हाथ दास तुलसी प्रभु क
अपनपौ हारे ॥ १०१ ॥

हरि तुम बहुत अनुग्रह कीन्हो । साधन ध
विबुध दुर्लभ तनु, मोहि कृपा करि दीन्हो
कोटिहु मुख कहि जाय न प्रभुके, एकएक उपका
तदपि नाथ कछु और मागिहौं, दीजे परम उदार
विषय वारि मन मीन भिन्न नाहिं, होत कबहुं प
एक । ताते सहिय विपति अति दारुण, जनम
योनि अनेक ॥ कृपा डोरि बंसी पद अङ्कुश, प
प्रेम मृदु चारो । एहि विधि वेधि हरहु मेरो दु
कौतुक राम तिहारो ॥ है श्रुति विदित उपाय सक
सुर, केहि केहि दीन निहोरै । तुलसिदास एहि जी
मोह रजु, जो बाँधै सोइ छोरै ॥ १०२ ॥

यह बिनती रघुवीर गुसाँई । और आश विश्व
भरोसो, हरु जियकी जड़ताई ॥ चहों न सुग
सुमति सम्पति कछु, रिधि सिधि विपुल बड़ाई
हेतु रहित अनुराग नाथ पद, बढ़ो अनुदिन अ

काई ॥ कुटिल करम लै जाय मोहि जहँ,-जहँ अपनी बरिआई । तहाँ तहाँ जनि छोह छाड़िये, कमठ अण्डकी नाई ॥ है जग में जहँ लगि या तनुकी, प्रीति प्रतीति सगाई । ते सब तुलसिदास प्रभुही सों होंहिं समिटि इक ठाई ॥ १०३ ॥

जानकी जीवन की बलि जैहों । चित कहै राम सीय पद परिहरि, अब न कहूँ चलि जैहों ॥ उपजी उर प्रतीति सपनेहुँ सुख, प्रभु पद विमुख न पैहों । मन समेत या तनुके बासिन्ह इहै सिखावन देहों ॥ श्रवणनि और कथा नहिं सुनिहों, रसना और न गैहों । रोकिहों नैन बिलोकत औरहि, शीश ईशही नैहों ॥ नातो नेह नाथ सों करि सब, नातो नेह बहैहों । यह छरभार ताहि तुलसी जग, जाको दास कहैहों ॥ १०४ ॥

अबलों नसानी अब न नसै हों । राम कृपा भव निशा सिरानी, जागे फिरि न डसैहों ॥ पायों नाम चारु चिन्तामणि, उर कर ते न खसैहों । श्याम रूप

शुचि रुचिर कसौटी, चित कञ्चनहि कसैहों ॥ पर-वश जानि हँस्यो निज इन्द्रिन्ह, इन वश ह्वै न हँसैहों । मन मधुपहि पनकै तुलसी, रघुपति पद कमल बसैहों ॥ १०५ ॥

राग रामकली ।

महाराज रामादर्यो धन्य सोई । गरुअ गुण राशि सर्वज्ञ सुकृती सुघर, शीलनिधि साधु तेहि सम न कोई ॥ उपल केवट कीश भालु निशिचर शबरि, गीध सम दम दया दान हीने । नाम लिय राम किय परम पावन सकल, तरत नर जासु गुण गान कीने ॥ व्याध अपराधकी साध राखी कवन, पिङ्गला कौन मति भक्ति भेई । कौन धौं सोमजाजी अजामिल अधम, कवन गजराज धौं बाजपेई ॥ पाण्डुसुत गोपिका विदुर कुबरी सबहि, शोध किय शुद्धता लेश कैसो । प्रेम लखि कृष्ण किय आपने तिनहुँको, सुयश संसार हरि हरको जैसो ॥ कोल खल भिल्ल यवनादि खस राम कहि, नीच ह्वै ऊँच

पद को न पायो । दीन दुख दवन श्री रवन करुणा भवन, पतित पावन विरद वेद गायो ॥ मन्द मति कुटिल खल तिलक तुलसी सरिस, भा न तिहुँ लोक तिहुँ काल कोऊ । नामकी कानि पहिचानि जन आपनो, ग्रसत कलि व्याल रख शरण सोऊ ॥ १०६ ॥

राग बिलावल ।

है नीको मेरो देवता कोशलपति राम । सुभग सरोरुह लोचन सुठि सुन्दर श्याम ॥ सिय समेत शोभित सदा, छबि अमित अनङ्ग । भुज विशाल शर धनु धरे, कटि चारु निखङ्ग ॥ बलि पूजा चाहत नहीं, चाहै इक प्रीति । सुमिरतही मानै भलो, पावन सब रीति ॥ देइ सकल सुख दुख दहै, आरत जन बन्धु । गुणगहि अघ अवगुण हरै, अस करुणासिन्धु ॥ देश काल पूरण सदा, वद वेद पुरान । सबको प्रभु सबमें बसै, सबकी गति जान ॥ को करि कोटिक कामना, पूजै बहु देव । तुलसिदास तेहि सेइये, शङ्कर जेहि सेव ॥ १०७ ॥

वीरमहा अवराधिये, साधे सिधि होइ । सकल काम पूरण करै, जानै सब कोइ ॥ वेगि बिलम्ब न कीजिये, लीजे उपदेश । बीजमन्त्र जापिये सोइ, जो जपत महेश ॥ प्रेम वारि तर्पण भलो, घृत सहज सनेह । संशय समिध अगिनि छमा, ममता बलि देह ॥ अघ उचाट मन वश करै, मारै मद मार । आकरषै सुख सम्पदा, सन्तोष विचार ॥ जे एहि भाँति भजन किये, मिले रघुपति ताहि । तुलसिदास प्रभु पथ चढ्यो, जो लेहु निबाहि ॥ १०८ ॥

कस न करहु करुणा हरे, दुख हरण मुरारि । त्रिविध ताप सन्देह शोक, संशय भय हारि ॥ यह कलिकाल जनित मल, मति मन्द मलिन मन । तेहि पर प्रभु न कर सँभार, केहि भाँति जियै जन ॥ सब प्रकार समरथ प्रभो, मैं सब विधि दीन । यह जिय जानि द्रवहु नहीं, मैं कर्म विहीन ॥ भ्रमत अनेक योनि रघुपति, पति आन न मोर । दुख सुख सहौं रहौं सदा, शरणागत तोर ॥ तुम सम देव न

कोउ कृपालु, समुझों मन माहिं। तुलसिदास हरि तोषिये, सो साधन नाहिं ॥ १०९ ॥

कहु केहि कहिय कृपानिधे, भवजनित बिपति अति। इन्द्रिय सकल बिकल सदा, निजनिज सुभाउ रति ॥ जो सुख सम्पति सरग, नरक सन्तत सँग लागी। हरि परिहरि सोइ यतन करत, मन मोर अभागी ॥ मैं अति दीन दयालु देव, सुनि मन अनुरागे। जो न द्रवहु रघुवीर धीर, काहे न दुख लागे ॥ यद्यपि मैं अपराध भवन, दुख शमन मुरारे। तुलसिदास कहँ आस इहै, बहु पतित उधारे ॥ ११० ॥

केशव कहि न जाइ का कहिये। देखत तव रचना विचित्र अति, समुझि मनहिं मन रहिये ॥ सून भीतिपर चित्र रङ्ग नहिं, कर बिनु लिखा चितेरे। धोये मिटै न मरै भीति दुख, पाइय एहि तनु हेरे ॥ रविकर नीर बसै अति दारुण, मकर रूप तेहि माहीं। बदन हीन सो ग्रसै चराचर, पान करन जे जाहीं ॥ कोउ कह सत्य झूंठ कह कोऊ, युगल

प्रबल करि मानै । तुलसिदास परिहरै तीनि भ्रम
सो आपन पहिचानै ॥ १११ ॥

केशव कारण कवन गुसाँई । जेहि अपराध
असाधु जानि मोहि, तजेहु अज्ञकी नाईं ॥ पर
पुनीत सन्त कोमल चित, तिनहिं तुमहिं बनिआइ
तौ कत विप्र व्याध गणिकाहि तारेहु कछु रही सगाई
काल करम गति अगति जीव की, सब हरि हा
तुम्हारे । सोइ कछु करहु हरहु ममता मम, फिरहुँ
तुमहिं विसारे ॥ जौ तुम तजहु भजौं न आन प्र
यह प्रमाण प्रण मोरे । मन बच करम नरक सुर
जहँ,-तहँ रघुवीर निहोरे ॥ यद्यपि नाथ उचित
होत अस, प्रभु सों करों ढिठाई । तुलसिदास सीद
निशिदिन, देखत तुम्हारि निठुराई ॥ ११२ ॥

माधव अब न द्रवहु केहि लेखे । प्रणतपाल प्र
तोर मोर प्रण, जिअउँ कमल पद देखे ॥ जबल
मैं न दीन दयाल तैं, मैं न दास तैं स्वामी । तबल
जो दुख सहेउँ कह्यो नहिं, यद्यपि अन्तर्यामी ॥

उदार मैं कृपिण पतित मैं, तैं पुनीत श्रुति गावै। बहुत नात रघुनाथ तोहि मोहि, अब न तजे बनि-आवै ॥ जनक जननि गुरु बन्धु सुहृद पति, सब प्रकार हितकारी। द्वैत रूप तम कूप परों नहिं, अस कछु यतन विचारी॥ सुनु अदभ्र करुणा वारिज लोचन, मोचन भय भारी। तुलसिदास प्रभु तव प्रकाश बिनु, संशय टरै न टारी ॥ ११३ ॥

माधव मो समान जग माहीं। सब विधि हीन मलीन दीन अति, लीन विषय कोउ नाहीं ॥ तुम सम हेतु रहित कृपालु आरत, हित ईश न त्यागी। मैं दुख शोक विकल कृपालु केहि,-कारण दया न लागी ॥ नाहिंन कछु अवगुण तुम्हार, अपराध मोर मैं माना। ज्ञान भवन तन दियहु नाथ सो, पाइ न मैं प्रभु जाना॥ वेनु करील श्रीखण्ड वसन्तहि, दूषण मृषा लगावै। सार रहित हत भाग्य सुरभि पल्लव सो कहहु किमि पावै॥ सब प्रकार मैं कठिन मृदुल हरि, दृढ़ बिचार जिय मोरे। तुलसिदास यह मोह शृङ्खला, छूटहि तुम्हरे छोरे ॥ ११४ ॥

माधव मोह फाँस क्यों टूटै । बाहर कोटि उपाय करिय, अभ्यन्तर ग्रन्थि न छूटै ॥ घृत पूरण कराह अंतगंत, शशि प्रतिबिम्ब दिखावै । ईंधन अनल लगाइ कलप शत, औटत नाश न पावै ॥ तरु कोटर महँ बस विहङ्ग तरु,-काटे मरे न जैसे । साधन करिय विचार हीन मन,-शुद्ध होइ नहिं तैसे ॥ अन्तर मलिन विषय मन अति तन,-पावन करिय पखारे। मरइ न उरग अनेक यतन वल्मीक विविध विधि मारे ॥ तुलसिदास हरि गुरु करुणा बिनु, बिमल विवेक न होई । बिनु विवेक संसार घोर निधि, पार न पावै कोई ॥ ११५ ॥

माधव असि तुम्हारि यह माया । करि उपाय पचि मरिय तरिय नहिं, जबलगि करहु न दाया ॥ सुनिय गुनिय समुझिय समुझाइय, दशा हृदय नहिं आवै । जेहि अनुभव बिनु मोह जनित भव,-दारुण विपति सतावै ॥ ब्रह्म पियूष मधुर शीतल जो,-पै मन सो रस पावै । तौ कत मृगजल रूप विषय

कारण निशि बासर धावै ॥ जेहिके भवन विमल चिन्तामणि, सो कत काँच बटोरै। सपने पर बश परै जागि देखत केहि जाइ निहोरै ॥ ज्ञान भगति साधन अनेक सब, सत्य झूँठ कछु नाहीं। तुलसिदास हरि कृपा मिटै भ्रम, यह भरोस मन माहीं ॥ ११६॥

हे हरि कवन दोष तोहि दीजे। जेहि उपाय सपनेहुँ दुर्लभ गति, सोइ निशि बासर कीजे ॥ जानत अर्थ अनर्थ रूप तम, कूप परब एहि लागे। तदपि न तजत श्वान अज खर ज्यों, फिरत विषय अनुरागे ॥ भूत द्रोह कृत मोह वश्य हित,-आपन मैं न विचारा। मद मत्सर अभिमान ज्ञानरिपु, इन महँ रहनि अपारा ॥ वेद पुराण सुनत समुझत रघुनाथ सकल जग व्यापी। वेधत नहिं श्रीखण्ड वेनु इव, सार हीन मन पापी ॥ मैं अपराध सिन्धु करुणाकर, जानत अन्तर्यामी। तुलसिदास भवव्याल ग्रसित तव,-शरण उरगारिपु गामी ॥ ११७॥

हे हरि कवन यतन सुखमानहु। ज्यों गज दशन तथा मम करनी, सब प्रकार तुम जानहु जो ॥ कछु

कहिय करिय भवसागर,-तरिय बच्छपद जैसे।
रहनि आन विधि कहनि आन हरि,-पद सुख पाइय
कैसे ॥ देखत चारु मयूर बरन शुभ,-बोल सुधा इ
सानी। सविष उरग आहार निठुर अस, य
करनी वह बानी ॥ अखिल जीव वत्सल निर्मत्सर
चरण कमल अनुरागी । ते तव प्रिय रघुवीर धीर
मति, अतिशय निज पर त्यागी ॥ यद्यपि मम
अवगुण अपार संसार योग्य रघुराया । तुलसिदा
निज गुण विचारि करुणा निधान करु दाया॥११८

हे हरि कवन यतन भ्रम भागे। देखत सुन
विचारत यह मन, निज सुभाव नहिं त्यागै ॥ भक्ति
ज्ञान वैराग्य सकल साधन एहि लागि उपाई
कोउ भल कहौ देउ कछु कोऊ, असि वासना
हियते जाई॥ जेहि निशि सकल जीव सूतहिं तव,
कृपापात्र जन जागै। निज करनी विपरीत दे
मोहि, समुझि महा भय लागै ॥ यद्यपि भग्न मनोर
विधिवश, सुख इच्छित दुख पावै। चित्रकार क
हीन यथा स्वारथ बिनु चित्र बनावै ॥ हृषीके

सुनि नाउँ जाउँ बलि, अति भरोस जिय मोरे। तुलसिदास इन्द्रिय सम्भव दुख, हरे बनिहि प्रभु तोरे॥ ११९॥

हे हरि कस न हरहु भ्रम भारी। यद्यपि मृषा सत्य भासै जब,-लगि नहिं कृपा तुम्हारी॥ अर्थ अविद्यमान जानिय संसृति नहिं जाइ गुसाँई। बिनु बन्धन निजहठ शठ परवश, परेउ कीरकी नांई॥ सपने व्याधि बिबिध बाधा जनु, मृत्यु उपस्थित आई। वैद अनेक उपाय करै, जागे बिनु पीर न जाई॥ श्रुति गुरु साधु समृति सम्मत यह, दृश्य सदा दुखकारी। तेहि बिनु तजे भजे बिनु रघुपति, विपति सकै को टारी॥ बहु उपाय संसार तरन कहँ, विमल गिरा श्रुति गावै। तुलसिदास मैं मोर गये बिनु, जिय सुख कबहुँ न पावै॥ १२०॥

हे हरि यह भ्रमकी अधिकाई। देखत सुनत कहत समुझत संशय सन्देह न जाई॥ जो जग मृषा ताप त्रय अनुभव, होत कहहु केहि लेखे।

कहि न जाइ मृग बारि सत्य भ्रम,-ते दुख होइ वि-
शेखे ॥ सुभग सेज सोवत सपने बारिधि बूड़त
भय लागै । कोटिहु नाव न पार पाव सो, जबलगि
आपु न जागै ॥ अनविचार रमणीय सदा संसार
भयङ्कर भारी । सम सन्तोष दया विवेकते, व्यव-
हारी सुखकारी ॥ तुलसिदास सब विधि प्रपञ्चजग,
यदपि झूँठ श्रुति गावै । रघुपति भगति सन्त सङ्गति
बिनु, को भव त्रास नसावै ॥ १२१ ॥

मैं हरि साधन करै न जानी । जस आमय
भेषज न कीन्ह तस, दोष कवन दरमानी[1] ॥ सपने
नृप कहँ घटै विप्रवध, विकल फिरै अघलागे ।
वाजिमेध शतकोटि करै नहिं,-शुद्धहोइ बिनुजागे ॥
स्रग महँ सर्प विपुल भयदायक प्रगट होइ अविचारे ।
बहु आयुध धरि बल अनेक करि, हारहि मरइ न
मारे ॥ निज भ्रमते रविकर सम्भव सागर अति
भय उपजावै । अवगाहत बोहित नौका चढ़ि

१ यह शब्द फारसी भाषाका है । दरमान चिकित्सा इलाज
को कहते ।

कबहूँ पार न पावै ॥ तुलसिदास जग आपु सहित जब,-लगि निर्मूल न जाई। तबलगि कोटि उपाय करिय पचि, मरिय तरिय नहिं भाई ॥ १२२ ॥

अस कछु समुझि परत रघुराया। बिनु तव कृपा दयालु दास हित, मोह न छूटै माया ॥ वाक्य ज्ञान अत्यन्त निपुण भव,-पार न पावै कोई। निशि गृह मध्य दीपकी बातन्ह, तम निवृत्त नहिं होई ॥ जैसे कोउ इक दीन दुखित अति, असन विना दुख पावै। चित्र कल्पतरु कामधेनु गृह,-लिखे न विपति नसावै ॥ षटरस बहुप्रकार व्यञ्जन कोउ, दिन अरु रैन बखानै। बिनु बोले सन्तोष जनित सुख, खाइ सोई पै जानै ॥ जबलगि नहिं निज हृदि प्रकाश अरु, विषय आश मन माहीं। तुलसिदास तबलगि जग योनि भ्रमत सपनेहुँ सुख नाहीं ॥ १२३ ॥

जो निज मन परिहरै विकारा। तौ कत द्वैत जनित संसृति दुख, संशय शोक अपारा ॥ शत्रु मित्र

मध्यस्थ तीनि ये, मन कीन्हे बरिआई। त्यागब गहब उपेक्षनीय अहि, हाटक तृणकी नाई॥ असन बसन पशु वस्तु विविध विधि, सब मणि महँ रह जैसे। सरग नरक चर अचर लोक बहु, बसत मध्य मन तैसे॥ विटप मध्य पुत्रिका सूत्र महँ, कंचुक बिनहिं बनाये। मन महँ तथा लीन नाना तनु, प्रगटत अवसर पाये॥ रघुपति भक्ति बारिछालित चित, बिनु प्रयासही सूझै। तुलसिदास कह चिदविलास जग,-बूझत बूझत बूझै॥ १२४॥

मैं केहि कहौं विपति अति भारी। श्री रघुवीर धीर हितकारी॥ मम हृदय भवन प्रभु तोरा। तहँ बसे आइ बहु चोरा॥ अति कठिन करहिं बरजोरा। मानहिं नहिं विनय निहोरा॥ तम मोह लोभ अहं-कारा। मद क्रोध बोधरिपु मारा॥ अति करहिं उप-द्रव नाथा। मर्दहिं मोहि जानि अनाथा॥ मैं एक अमित बटपारा। कोउ सुनै न मोर पुकारा॥ भागेहु नहिं नाथ उबारा। रघुनायक करहु सँभारा॥

कह तुलसिदास सुनु रामा। लूटहिं तस्कर तव धामा॥ चिन्ता यह मोहि अपारा। अपयश नाहिं होइ तुम्हारा॥ १२५॥

मन मेरे मानहि सिख मेरी। जो निज भगति चहै हरि केरी॥ उर आनहि प्रभु कृत हित जेते। सेवहि ते जे अपनपौ चेते॥ दुख सुख अरु अपमान बड़ाई। सब सम लेखहि विपति विहाई॥ सुनु सठ काल ग्रसित यह देही। जनि तेहि लागि विदूषहि केही॥ तुलसिदास बिनु असि मति आये। मिलहिं न राम कपट लय लाये॥ १२६॥

मैं जानी हरि पद रति नाहीं। सपनेहु नाहिं विराग मन माहीं॥ जे रघुवीर चरण अनुरागे। ते सब भोग रोग सम त्यागे॥ काम भुजङ्ग डसत जब जाही। विषय नींब कटु लगत न ताही॥ असमञ्जस अस हृदय विचारी। बढ़त शोच नित नूतन भारी॥ जब कब राम कृपा दुख जाई। तुलसिदास नहिं आन उपाई॥ १२७॥

सुमिरु सनेह सहित सीतापति। राम चरण तजि नाहिं न आन गति॥ जप तप तीरथ योग समाधी। कलि मति विकल न कछु निरुपाधी॥ करतहु सुकृत न पाप सिराहीं। रक्तबीज जिमि बाढ़त जाहीं॥ हरणि एक अघ असुर जालिका। तुलसिदास प्रभु कृपा कालिका॥ १२८॥

रसना तूँ राम राम, राम क्यों न रटत। सुमिरत सुख सुकृत बढ़त, अघ अमङ्गल घटत॥ बिनु श्रम कलि कलुष जाल, कटु कराल कटत। दिनकरके उदय जैसे, तिमिर तोम फटत॥ योग याग जप विराग, तप सुतीर्थ अटत। बाँधिबेको भव गयन्द, रेनुकी रज्जु बटत॥ परिहरि सुरमणि सुनाम, गुञ्जा लखि लटत। लालच लघु तेरो लखि, तुलसि तोहि हटत॥ १२९॥

राम राम राम राम, राम राम जपत। मङ्गल मुद उदित होत कलिमल छल छपत॥ कहुके लहै फल रसाल, बबुर बीज बपत। हारहि जनि जन्म जाय,

गाडगूल गपत ॥ काल कर्म गुण सुभाव, सबके शिर तपत । राम नाम महिमाकी, चरचा चले चपत ॥ साधन बिनु सिद्धि सकल विकल लोग लपत । कलियुग वर वानिज विपुल, नाम नगर खपत ॥ नाम सों प्रतीति प्रीति, हृदय सुथिर थपत । पावन किय रावणरिपु, तुलसिहु से अपत ॥ १३० ॥

प्रेम राम चरण कमल, जनम लाहु परम । राम नाम लेत होत, सुलभ सकल धरम ॥ योग मख विवेक विराति, वेद विदित करम । करिबे कहँ कटु कठोर, सुनत मधुर नरम ॥ तुलसी सुनि जानि बूझि, भूलहि जनि भरम । प्रभु को तूँ होहि जाहि, सबहीकी शरम ॥ १३१ ॥

प्रीतमकी प्रीति रहित, जीव जाय जियत । जेहि सुख सुख मानि लेत, सुख सो समुझ कियत ॥ जहँ जहँ जेहि योनि जनम, महि पताल वियत । तहँ तहँ तूँ विषय सुखहि, चहत लहत नियत ॥ कत विमोह लटो फटो, गगन मगन सियत । तुलसी प्रभु सुयश गाइ, क्यों न सुधा पियत ॥ १३२ ॥

फिरि फिरि हित प्रिय पुनीत, सत्य वचन कहत। सुनि मन गुनि समुझि क्यों न, सुगम सुमग गहत ॥ छोट बड़ो खोट खरो, जग जो जहँ रहत । अपने अपने क भलो कहहु जो न चहत ॥ विधि लगि लघु कीट अवधि, सुख सुखि दुख दहत । पशु लौं पशु-पाल ईश, बाँधि छोरि नहत ॥ विषय मुद निहार भार, शिर ज्यों काँध वहत । यों हीं जिय जानि मानि, सठ तुँ सासति सहत ॥ पायो केहि घृत विचारु, हरिण वारि महत । तुलसी तकु ताहि शरण, जाते सब लहत ॥ १३३ ॥

बारबार देव द्वार परि पुकार करत । आरति नति दीन कहे, सङ्कट प्रभु हरत ॥ लोकपाल शोक विकल, रावण डर डरत । का सुनि सकुचे कृपालु, नर शरीर धरत ॥ कौशिक मुनि तीय जनक, शोच अनल जरत । साधन केहि शीतल भे, सो न समुझि परत ॥ केवट खग शबरि सहज, चरण कमल न रत । सन्मुख तव होत नाथ, कुतरु सुफल फरत ॥

बन्धु बैर कपि बिभीषण, गुरु गलानि गरत। सेवा केहि रीझि राम, किये सरिस भरत॥ सेवक भे पवन पूत, साहब अनुहरत। जाको लिय नाम राम, सबहि सुढर ढरत॥ जाने बिनु राम रीति, पचि पचि जग मरत। परिहरि छल शरण गये, तुलसिहु से तरत॥ १३४॥

राग सूहो-बिलावल।

राम सनेही सों तैं न सनेह कियो। अगम जो अमरनिहूँ सो तनु तोहि दियो॥ हरिगीतिका छन्द॥ दिय सुकुल जन्म शरीर सुन्दर, हेतु जो फल चारि को। जो पाइ पण्डित परम पद पावत पुरारि मुरारि-को॥ यह भरतखण्ड समीप सुरसरि, थल भलो सङ्गति भली। तेरो कुमति कायर कलपबल्ली चहति है विष फल फली॥ १॥ अजहुँ समुझि चित दै सुनु परमारथ। है हित सो जगहूँ जाहि ते स्वारथ॥ छन्द॥ स्वारथहि प्रिय स्वारथ सु काते, कवन वेद बखानई। मन देखु खल अहि खेल परिहरि, सो

प्रभुहि पहिचानई ॥ पितु मातु गुरु स्वामी अपनपौ, तिय तनय सेवक सखा। प्रिय लगत जाके प्रेम सों बिनु,-हेतु हित नहिं लैं लखा ॥ २ ॥ दूरि न सो हितू हेरु हियेही है। छलहि छाड़ि सुमिरे छोह कियेही है ॥ छन्द ॥ किय छोह छाया कमल कर की, भक्त पर भज तेहि भजे। जगदीश जीवन जीव-को जो, साज सब सबको सजै ॥ पुनि हरिहि हरिता विधिहि विधिता, शिवहि शिवता जो दई। सो जान-कीपति मधुर मूरति, मोद मय मङ्गल मई ॥ ३ ॥ ठाकुर अतिहि बड़ो शील सरल सुठि। ध्यान अगम शिवहू भेंट्यो केवट उठि ॥ छन्द ॥ भरि अङ्क भेंट्यो सजल नयन सनेह शिथिल शरीर सों। सुर सिद्ध मुनि कवि कहत कोउ न, प्रेम प्रिय रघुवीर सों ॥ खग शबरि निशिचर भालु कपि किय, आपु ते वन्दित बड़े। तापर तिन्हके सेवा सुमिरि जिय, जात जनु सकुचनि गड़े ॥ ४ ॥ स्वामी को सुभाव कह्यो जब उर आनिहै। सोच सकल मिटि है राम भलो मानिहैं ॥ छन्द ॥ भल मानिहैं रघुनाथ जोरि

जु, हाथ माथो नाइहै । ततकाल तुलसीदास जीवन, जनम को फल पाइहै ॥ जपि नाम करहि प्रणाम कहि गुण,-ग्राम रामहिं धरि हिये । विचरहि अवनि अवनीश चरण सरोज मन मधुकर किये॥८॥१३६॥

जिय जबते हरिते बिलगान्यो । तबते देह गेह निज जान्यो ॥ माया वश स्वरूप बिसरायो । तेहि भ्रमते दारुण दुख पायो ॥ छन्द ॥ पायो जु दारुण दुसह दुख सुख,-लेश नहिं सपनेहु मिल्यो । भव शूल शोक अनेक जेहि तेहि,-पन्थ तूँ हठि हठि चल्यो ॥ बहु योनि जन्म जरा विपति मति,-मन्द हरि जान्यो नहीं । श्रीराम बिनु विश्राम मूढ़ विचार लख पायो कहीं ॥१॥ आनद सिन्धु मध्य तव बासा । बिनु जाने कस मरसि पियासा ॥ मृग भ्रम बारि सत्य जल जानी । तहँ तूँ मगन भयो सुख मानी ॥ छन्द ॥ तहँ मगन मज्जसि पान करि त्रय,-काल जल नाहीं जहाँ । निज सहज अनुभव रूप तव खल, भूलि अब आयो तहाँ ॥ निर्मल निरञ्जन निर्विकार उदार सुख तैं परिहरयो । निःकाज राज बिहाइ नृप

इव, सपन कारागृह पर्यो ॥ २ ॥ तैं निज कर्म डोरि दृढ़ कीन्ही। अपने करनि गाँठि गहि दीन्ही ॥ ताते परवश परेउ अभागे। ता फल गर्भबास दुख आगे ॥ छन्द ॥ आगे अनेक समूह संसृति, उदर गत जान्यो सोऊ। शिर हेठ ऊपर चरण सङ्कट, बात नहिं पूंछै कोऊ ॥ शोणित पुरीष जु मूत्र मल कृमि, कर्दमावृत सोवही। कोमल शरीर गँभीर वेदन, शीश धुनि धुनि रोवही ॥ ३ ॥ तैं निज कर्म जाल जहँ घेरो। श्रीहरि सङ्ग तज्यो नहिं तेरो ॥ बहु विधि प्रतिपालन प्रभु कीन्हों। परम कृपालु ज्ञान तोहि दीन्हों ॥ छन्द ॥ तोहि दियो ज्ञान विवेक जन्म अनेक की तब सुधि भई। तेहि ईशकी हौं शरण जाकी, विषम माया गुणमई ॥ जेहि किये जीव निकाय वश रस,-हीन दिन दिन अति नई। सो करहु वेगि सँभार श्रीपति, विपति महँ जेहि मति दई ॥ ४ ॥ पुनि बहु विधि गलानि जिय मानी। अब जग जाइ भजों चक्रपानी ॥ ऐसहि करि विचार चुप साधी। प्रसव पवन प्रेर्यो अपराधी ॥ छन्द ॥

प्रेर्यो जु प्रसव प्रचण्ड मारुत, कष्ट नाना तैं सह्यो। सो ज्ञान ध्यान विराग अनुभव, यातना पावक दह्यो॥ अति खेद व्याकुल अल्प बल छिन,-एक बोलि न आवई। तव तीव्र कष्ट न जान कोउ सब,- लोग हरषित गावई॥ ५॥ बाल दशा जेते दुख पाये। अति असीम नहिं जाहिं गनाये॥ छुधा व्याधि बाधा भइ भारी। वेदन नहिं जानै महँतारी॥ छन्द॥ जननी न जानै पीर सो केहि,-हेतु शिशु रोदन करै। सो करै विविध उपाय जातें, अधिक तुव छाती जरै॥ कौमार शैशव अरु किशोर अपार अघ को कहि सकै। व्यतिरेक तोहि निर्दय महा खल, आन कहु को सहि सकै॥ ६॥ यौवन युवति सङ्ग रँग रात्यो। तब तूँ महा मोह मद मात्यो॥ ताते तजी धर्म मर्यादा। बिसरे ते सब प्रथम विषादा॥ छन्द॥ बिसरे विषाद निकाय सङ्कट, समुझि नहिं फाटत हियो। फिरि गर्भ गत आवर्त संसृति, चक्र जेहि सोइ सोइ कियो॥ कृमि भस्म विट परिणाम तनु तेहि, लागि जग वैरी भयो।

पर दार परधन द्रोह पर संसार बाढ़ै नित नयो ॥७॥ देखतही आई बिरधाई। जो तें सपनेहुँ नाहिं बुलाई ॥ ताके गुण कछु कहे न जाहीं। सो अब प्रगट देखु तन माहीं ॥ छन्द ॥ सो प्रगट तनु जर्जर जरा वश, व्याधि शूल सतावई। शिर कम्प इन्द्रिय शक्ति प्रतिहत, वचन काहु न भावई ॥ गृह पालहू ते अति निरादर, खान पान न पावई। ऐसिहु दशा न विराग तहँ तृष्णा तरङ्ग बढ़ावई ॥ ८ ॥ कहिको सकै महा भव तेरे। जन्म एकके कछुक कहे रे ॥ खानि चारि सन्तत अवगाही। अजहुँ न करु विचार मन माहीं ॥ छन्द ॥ अजहू विचार विकार तजि भजु, राम जन सुख दायकं। भवसिन्धु दुस्तर जलरथं भजु, चक्रधर सुरनायकं ॥ बिनु हेतु करुणाकर उदार अपार माया तारनं। कैवल्य पति जगपति रमापति, प्राणपति गति कारनं ॥ ९ ॥ रघुपति भक्ति सुलभ सुखकारी। सो त्रय ताप शोक भय हारी ॥ बिनु सतसंग भक्ति नहिं होई। ते तब मिलैं द्रवैं जब सोई ॥ छन्द ॥ जब द्रवैं दीन दयालु राघव साधु सङ्गति

पाइये । जेहि दरश परश समागमादिक पाप राशि नसाइये ॥ जिनके मिले सुख दुख समान अमानता-दिक गुण भये । मद मोह लोभ विषाद क्रोध सुबोध ते सहजहिं गये ॥१०॥ सेवत साधु द्वैत भय भागे । श्रीरघुबीर चरण लय लागे ॥ देह जनित विकार सब त्यागै । तब फिरि निज सरूप अनुरागै ॥ छन्द ॥ अनुराग सो निज रूप जो जग,-ते विलक्षण देखिये । सन्तोष सम शीतल सदा दम, देहवन्त न लेखिये ॥ निर्मल निरामय एक रस तेहि,-हर्ष शोक न व्यापई । त्रय लोक पावन सो सदा जाकी दशा ऐसी भई ११॥ जो तेहि पन्थ चलै मन लाई । तौ हरि काहे न होंहि सहाई ॥ जो मारग श्रुति साधु दिखावैं । तेहि पथ चलत सबहि सुख पावैं ॥ छन्द ॥ पावै सदा सुख हरि कृपा संसार आशा तजि रहै । सपनेहुँ नहीं दुख द्वैत दरशन, बात कोटिक को कहै ॥ द्विज देव गुरु हरि सन्त बिनु संसार पार न पाइये । यह जानि तुलसीदास त्रास हरण रमापति गाइये॥१२॥१३६॥

राग बिलावल ।

जापै कृपा रघुपति कृपालु की, बैर और के कहा सरै । होइ न बाँका बार भगत को, जो कोउ कोटि उपाय करै ॥ तकै नीच जो मीच साधु की, सो पाँवर तेहि मीचु मरै । वेद विदित प्रह्लाद कथा सुनि, को न भक्ति पथ पाउँ धरै ॥ गज उधारि हरि थप्यो विभीषण, ध्रुव अविचल कबहू न टरै । अम्बरीष की शाप सुरति करि, अजहुँ महा मुनि ग्लानि गरै ॥ सो न कहा जो कियो सुयोधन, अबुध आपने मान जरै । प्रभु प्रसाद सौभाग्य विजय यश, पाण्डव ने बरिआइ बरै ॥ जो जो कूप खनैगो पर को, सो सठ फिरि तेहि कूप परै । सपनेहुँ सुख न सन्त द्रोही कहँ, सुरतरु सो विष फरनि फरै ॥ है काके द्वै शीश ईश के, जो हठि जन की सीम चरै । तुलसिदास रघुवीर बाहु बल, सदा अभय काहू न डरै ॥ १२७ ॥

कबहुँ सो कर सरोज रघुनायक, धरिहौ नाथ शीश मेरे । जेहि कर अभय किये जन आरत, बारक विवश

नाम टेरे ॥ जेहि कर कमल कठोर शम्भु धनु, भञ्जि जनक संशय मेट्यो। जेहि कर कमल उठाइ बन्धु ज्यों, परम प्रीति केवट भेंट्यो॥ जेहि कर कमल कृपालु गीध कहँ, पिंड देइ निजलोक दियो। जेहि कर बालि विदारि दास हित, कपिकुल पति सुग्रीव कियो॥ आयो शरण सभीत विभीषण, जेहि कर कमल तिलक कीन्हों। जेहि कर गहि शर चाप असुर हति, अभय दान देवन्ह दीन्हों॥ शीतल सुखद छांह जेहि कर की, मेटति पाप ताप माया। निशि बासर तेहि कर सरोज की, चाहत तुलसिदास छाया॥ १३८॥

दीन दयालु दुरित दारिद दुख, दुनी दुसह तिहुँ ताप तई है। देव दुआर पुकारत आरत, सब की सब सुख हानि भई है॥ प्रभु के वचन वेद बुध सम्मत, मम मूरति महिदेव मई है। तिन्हकी मति रिस राग मोह मद, लोभ लालची लीलि लई है॥ राज समाज कुसाज कोटि कटु,-कल्पत कलुष कुचालि नई है।

नीति प्रतीति प्रीति परमिति पति, हेतुवाद हठि हेरि हई है ॥ आश्रम वर्ण धरम विरहित जग, लोक वेद मरयाद गई है । प्रजा पतित पाखण्ड पाप रत, अपने अपने रङ्ग रई है ॥ शान्ति सत्य शुभ रीति गई घटि, बढ़ी कुरीति कपट कलई है । सीदत साधु साधुता शोचति, खल विलसत हुलसति खलई है ॥ परमारथ स्वारथ साधन भे, अफल सकल नहिं सिद्धि सई है । कामधेनु धरनी कलि गोमर, विवश विकल जामति न बई है ॥ कलि करनी वरनिये कहाँ लौं, करत फिरत विनु टहल टई है । तापर दाँत पीसि कर मीजत, को जानै चित कहा ठई है ॥ त्यों त्यों नीच चढ़त शिर ऊपर, ज्यों ज्यों शील वश ढील दई है । सरुष वरजि तरजिये तरजनी, कुम्हिलैहै कुम्हड़ेकी जई है ॥ दीजे दाद देखि नातो बलि, मही मोद मङ्गल रितई है । भरे भाग अनुराग लोग कहैं, राम अवधि चितवनि चितई है ॥ विनती सुनि

---

१ नास्तिक मत । २ न्याय; पुरस्कार, यह फारसी भाषाका शब्द है इन्साफ बखशीश के अर्थ में प्रयोग किया जाता है ।

सानंद हेरि हँसि, करुणा वारि भूमि भिजई है। राम राज भो काज सगुन शुभ, राजा राम जगत विजई है॥ समरथ बड़ो सुजान सुसाहेब, सुकृत सेन हारत जितई है। सुजन सुभाव सराहत सादर अनायास सासति बितई है॥ उथपे थपन उजारि बसावन, गई बहोरि बिरद सदई है। तुलसी प्रभु आरत आरति हर, अभय बाँह केहि केहि न दई है॥ १३९॥

ते नर नरक रूप जीवत जग, भव भञ्जन पद विमुख अभागी। निशि बासर रुचि पाप अशुचि मन, खल मति मलिन निगम पथ त्यागी॥ नहिं सतसङ्ग भजन नहिं हरि को, श्रवण न राम कथा अनुरागी। सुत वित दार भवन ममता निशि,-सोवत अति न कबहुँ मति जागी॥ तुलसिदास हरि नाम सुधा तजि, सठ हठि पियत विषय विष माँगी। शूकर श्वान शृगाल सरिस जन, जनमत जगत जननि दुख लागी॥ १४०॥

रामचन्द्र रघुनायक तुमसों, हौ विनती केहि

भाँति करों । अघ अनेक अवलोकि आपने, अनघ नाम अनुमानि डरों ॥ पर दुख दुखी सुखी पर सुखते, सन्त शील नहिं हृदय धरों । देखि आनकी विपति परम सुख, सुनि सम्पति बिनु आगि जरों ॥ भगति विराग ज्ञान साधन कहि, बहु विधि डहँकत लोग फिरों । शिव सरबस सुख धाम नाम तव, बेंचि नरक प्रद उदर भरों ॥ जानतहू निज पाप जलधि जिय, जल सीकर सम सुनत लरों । रज सम पर अवगुण सुमेर करि, गुण गिरि सम रज ते निदरों ॥ नाना वेष बनाइ दिवस निशि, पर वित जेहि तेहि जुगुति हरों । एकौ पल न कबहुँ अलोल चित, हित दे पद सरोज सुमिरों ॥ जो आचरण विचारहु मेरो, कल्प कोटि लगि अवटि मरों । तुलसिदास प्रभु कृपा बिलोकनि, गोपद ज्यों भव सिन्धु तरों ॥ १४१ ॥

सकुचत हौं अति राम कृपानिधि, क्यों करि विनय सुनावों । सकल धर्म विपरीत करत केहि भाँति नाथ मन भावों ॥ जानतहूँ हरि रूप चराचर मैं हठि नयन न लावों । अञ्जन केश शिखा युवती

तहँ,-लोचन शलभ पठावों ॥ श्रवणनि को फल कथा तिहारी, यह समुझों समझावों । तिन्ह श्रवणनि पर दोष निरन्तर, सुनि सुनि भरि भरि तावों ॥ जेहि रसना गुण गाइ तिहारे, विनु प्रयास सुख पावों । तेहि मुख पर अपवाद भेक ज्यों, रटि रटि जनम नसावों ॥ करहु हृदय अति विमल बसहिं हरि, कहि कहि सबहि सिखावों । हौं निज उर अभिमान मोह मद, खल मण्डली बसावों ॥ जो तनु धरि हरि पद साधहिं जन, सो विनु काज गँवावों । हाटक घट भरि धरयो सुधा गृह, तजि नभ कूप खनावों ॥ मन क्रम वचन लाइ कीन्हे अघ, ते करि यतन दुरावों । पर प्रेरित इरषा वश कबहुँक, किय कछु शुभ सो जनावों ॥ विप्र द्रोह जनु बाँट परयो हठि, सबसों बैर बढ़ावों । ताहू पर निज मति विलास सब,-सन्तन्ह माँझ गनावों ॥ निगम शेष शारद निहोरि जो, अपने दोष कहावों । तौ न सिराहिं कल्प शत लगि प्रभु, कहा एक मुख गावों ॥ जो करनी आपनी विचारों, तौ कि शरण हौं आवों । मृदुल सुभाव शील

रघुपति को, सो बल मनहिं दिखावों ॥ तुलसिदास प्रभु सो गुण नाहिं जेहि, सपनेहु तुम्हहिं रिझावों। नाथ कृपा भव सिन्धु धेनु पद,-सम जो जानि सिरावों ॥ १४२ ॥

सुनहु राम रघुवीर गुसाँई, मन अनीति रत मेरो। चरण सरोज बिसारि तिहारे, निशि दिन फिरत अनेरो ॥ मानत नहीं निगम अनुशासन, त्रास न काहू केरो। भूल्यो शूल कर्म कोल्हुन तिल, जउ बहु बारनि पेरो ॥ जहँ सतसङ्ग कथा माधव की, सपनेहुँ करत न फेरो। लोभ मोह मद काम क्रोध रत, तिन्ह सों प्रेम घनेरो ॥ पर गुण सुनत दाह पर दूषण,-सुनत हरष बहुतेरो। आप पाप को नगर बसावत, सहि न सकत पर खेरो ॥ साधन फल श्रुति सार नाम तव, भव सरिता कहँ बेरो। सो पर कर काकिनी लागि सठ बेंचि होत हठि चेरो ॥ कबहुँक हौं सङ्गति सुभाव ते, जाउँ सुमारग नेरो। तब करि क्रोध सङ्ग कु मनोरथ, देत कठिन भट

भेरो ॥ इक हौं दीन मलीन हीन अति, विपति जाल अति घेरो । तापर सहि न जाइ करुणानिधि, मन को दुसह दरेरो ॥ हारि पर्‌यों करि यतन विविध विधि, ताते कहत सबेरो । तुलसिदास यह त्रास मिटै जब, हृदय करहु तुम डेरो ॥ १४३ ॥

सो धौं को जो नाम लाज ते, नहिं राख्यो रघुवीर । कारुणीक बिनु कारणही हरि, हरी सकल भव भीर ॥ वेद विदित जग विदित अजामिल, विप्र बन्धु अघ धाम । घोर यमालय जात निवार्‌यो, सुत हित सुमिरत नाम ॥ पशु पाँवर अभिमान सिन्धु गज,-ग्रस्यो आइ जब ग्राह । सुमिरत सकृत सपदि आये प्रभु, हर्‌यो दुसह उर दाह ॥ व्याध निषाद गिद्ध गणिकादिक, अगणित अवगुण मूल । नाम ओट ते राम सबनि की, दूरि करी सब शूल ॥ केहि आचरण घाटि हौं तिन्हते, रघुकुल भूषण भूप । सीदत तुलसिदास निशि वासर, पर्‌यो भीम तम कूप ॥ १४४ ॥

कृपासिन्धु जन दीन दुआरे, दाद न पावत काहे॥ जब जहँ तुमहिं पुकारत आरत, तब तिनके दुख दाहे॥ गज प्रहलाद पाण्डु सुत कपि सब,-के रिपु सङ्कट मेट्यो। प्रणत बन्धु भय विकल विभीषण, उठि सो भरत ज्यों भेंट्यो॥ मैं तुम्हरो लै नाम ग्राम इक, उर आपने बसावों। भजन विवेक विराग लोग भल, करम करम करि ल्यावों॥ सुनि रिस भरे कुटिल कामादिक, करहिं जोर बरिआई। तिन्हहिं उजारि नारि अरि घन पुर, राखहिं राम गुसाई॥ सम सेवा छल दान दण्ड हौं, रचि उपाय पचि हार्‌यों। बिनु कारण के कलह बड़ो दुख, प्रभु सों प्रगटि पुकार्‌यों॥ सुर स्वारथी अनीश अलायक, निठुर दया चित नाहीं। जाउँ कहाँ को विपति निवारक, भव तारक जग माहीं॥ तुलसी यदपि पोच तौ तुम्हरो, और न काहू केरो। दीजे भगति बाँह बैरक ज्यों, सुबस बसै यह खेरो॥ १४८॥

हौं सब विधि राम रावरो, चाहत भयो चेरो। ठौर ठौर साहिब होत है, ख्याल काल कलि केरो॥

काल करम इन्द्रिय विषय, गाहक गण घेरो। हौं न कबूलत बाँधि के, मोल करत करेरो॥ बन्दि छोर तव नाम है, विरुदैत बड़ेरो। मैं कह्यों तब छल प्रीति कै, माँग्यो उर डेरो॥ नाम ओट आजलौं बच्यों, मल युग जग जेरो। अब न गरीब जमो-गिये, पाइबो न हेरो॥ जेहि कौतुक बक श्वान को, प्रभु न्याव निबेरो। तेहि कौतुक करिये कृपालु, तुलसी है मेरो॥ १४६॥

कृपासिन्धु ताते रहौं, निशि दिन मन मारे। महा-राज लाज आपुही, निज जाँघ उघारे॥ मिले रहैं मारयो चहैं, कामादि सँघाती। मो बिनु रहैं न मेरिये, जारैं छलि छाती॥ बसत हिये हित जानि मैं, सबकी रुचि पाली। कियो कथिकको दण्ड हौं, जड़ कर्म कुचाली॥ देखी सुनी न आज लौं, अप-नायत ऐसी। करैं सबै शिर मेरेही, फिरि परै अनैसी॥ बड़े अलेखी लखि परैं, परिहरे न जाहीं। असमञ्जस में मगन हौं, लीजे गहि बाहीं॥ बारक बलि अव-

लोकिये, कौतुक जन जीको। अनाथास मिट जायगो; सङ्कट तुलसीको ॥ १४७ ॥

कहों कवन मुँह लाइके, रघुबीर गुसांई । सकुचत समुझत आपनी, सब सांइ दोहाई ॥ सेवत वश सुमिरत सखा, शरणागत सौं हौं । गुण गण सीतानाथके, चित करत न हौं हौं ॥ कृपासिन्धु बन्धु दीनके, आरत हितकारी । प्रणतपाल बिरदावली, सुनि जानि बिसारी ॥ सेइ न घेइ न सुमिरिके, पद प्रीति सुधारी। पाइ सुसाहेब राम सौं, भरि पेट बिगारी ॥ नाथ गरीब निवाज हैं, मैं गही न गरीबी । तुलसीप्रभु निज ओर ते, बनि परै सो कीबी ॥ १४८ ॥

कहाँ जाउँ कासो कहों और ठौर न मेरे । जनम गँवायो तेरेही, द्वार किङ्कर तेरे ॥ मैं तो बिगारी नाथ सों, स्वारथ के लीन्हे । तोहि कृपानिधि क्यों बनै मेरी सी कीन्हे ॥ दिन दुर्दिन दिन दुर्दशा, दिन दुख दिन दूषण । जौलौं तू न बिलोकिहै, रघुवंश विभूषण ॥ दुई पीठ बिनु दीठ मैं, तुम विश्व बिलोचन । तोसों

तुहीं न दूसरो, नत शोच विमोचन ॥ पराधीन देव दीन हौं, स्वाधीन गुसाँई । बोलनिहारे सों करै, बलि विनय कि झाँई ॥ आपु देखि मोहि देखिये, जन जानिय साँचो । बड़ी ओट राम नामकी, जेहि लई सो बाँचो ॥ रहनि रीति राम रावरी, नित हिय हुलसी है । ज्यों भावै त्यों करु कृपा, तेरो तुलसी है ॥ १४९ ॥

रामभद्र मोहि आपनो, शोच है अरु नाहीं । जीव सकल सन्तापके, भाजन जग माहीं ॥ नातो बड़े समर्थ सों, इक ओर किधौं तू । तोको मोसे अति घने, मोको एक तूँ ॥ बड़ि गलानि हानि हिय है, सर्वज्ञ गुसाँई । क्रूर कुसेवक कहत है, सेवक की नाँई ॥ भलो पोच रामको कहैं, मोहि सब नर नारी । बिगरे सेवक श्वान सों, साहेब शिर गारी ॥ असमञ्जस मन को मिटै, सो उपाय न सूझै । दीनबन्धु कीजे सोई, बनि परै जो बूझै ॥ विरदावली विलोकिये, तिनमें कोउ हौं हौं । तुलसी प्रभुको परिहरचो, शरणागत सोंहौं ॥ १५० ॥

जोपै चेराई रामकी, करतो न लजातो। तौ तूँ दाम कुदाम ज्यों, कर कर न बिकातो॥ जपत जीह रघुनाथको, नाम नहिं अलसातो। बाजीगरके सूम ज्यों, खल खेह न खातो॥ जो तूँ मन मेरे कहे, राम काम कमातो। सीतापति सन्मुख सुखी, सब ठाँव समातो॥ राम सुहाते तोहिं जो, तूँ सबहि सुहातो। काल कर्म कुलि कारनी, कोउ न कोंहातो॥ राम नाम अनुरागही, जिय जो रति आतो। स्वारथ परमारथ पथी, तोहि सब पतियातो॥ सेइ साधु सुनि समुझि कै, पर पीर पिरातो। जनम कोटिको काँदलो, हद हृदय थिरातो॥ भव मग अगम अनन्त है, बिनु श्रमहि सिरातो। महिमा उलटे नामकी, मुनि किये किरातो॥ अमर अगम तनु पाइ सो, जड़ जाय न जातो। होतो मङ्गल मूल तूँ, अनुकूल बिधातो॥ जो मन प्रीति प्रतीति सों, राम नामहि रातो। तुलसी राम प्रसाद सों, तिहुँ ताप न तातो॥ १६१॥

राम भलाई आपनी, भल कियो न काको। युग युग जानकि नाथको, जग जागत साको॥ ब्रह्मादिक विनती करी, कहि दुख वसुधाको। रवि-कुल कैरव चन्द भो, आनन्द सुधाको॥ कौशिक गरत तुषार ज्यों, तकि तेज तियाको। प्रभु अनहित हित को दियो,-फल कोप किया को॥ हरे पाप आप जाइके, सन्ताप शिला को। शोच मगन काढ़े सही, साहेब मिथिला को॥ रोष राशि भृगुपति धनी, अहमिति ममताको। चितवत भाजन करि लियो, उपशम समता को॥ मुदित मानि आयसु चले,-वन मातु पिता को। धरम धुरन्धर धीर धुर, गुण शील जिताको॥ गुह गरीब गत ज्ञातिहू, जेहि जिउ न भखा को। पायो पावन प्रेम ते, सन-मान सखाको॥ सद्गति शबरी गीधकी, सादर करताको। शोच सींव सुग्रीवके, सङ्कट हरताको॥ राखि विभीषण को सकै, अस काल गहाको। आज विराजत राज है, दशकण्ठ जहाँ को॥ बालिसं बासी अवधके, बूझिये न खाको। ते पाँवर पहुँचे

तहाँ, जहँ मुनि मन थाको ॥ गति न लहै राम नाम सों, अस विधि सिरजा को । सुमिरत कहत प्रचारि के, वल्लभ गिरिजा को ॥ अकनि अजामिल की कथा, सानन्द न भा को । नाम लेत कलिकालहू, हरिपुरहि न गा को ॥ राम नाम महिमा करै, काम-भूरुह आको । साखी वेद पुराण है, तुलसी तन ताको ॥ १५२ ॥

मेरे रावरियै गति है, रघुपति बलि जाउँ । निडर नीच निर्गुण निर्धन कहँ, जग दूसरो न ठाकुर ठाउँ ॥ है घरघर भव भरे सुसाहेब, सूझत सबहि आपनो दाउँ । बानर बन्धु विभीषण हित बिनु, कोशलपाल कहूँ न समाउँ ॥ प्रणतारति भञ्जन जन रञ्जन, शरणागत पवि पञ्जर नाउँ । कीजे दास दास तुलसी अब, कृपासिन्धु बिनु मोल बिकाउँ ॥ १५३ ॥

देव दूसरो कौन दीनको दयालु । शील निधान सुजान शिरोमणि, शरणागत प्रिय प्रणत पालु ॥ को

समर्थ सर्वज्ञ सकल प्रभु, शिव सनेह मानस मराल । को साहेब किय मीत प्रीति वश, खग निशिचर कपि भील भाल ॥ नाथ हाथ माया प्रपञ्च सब, जीव दोष गुण कर्म काल । तुलसिदास भल पोच रावरो, नेकु निरखि कीजे निहाल ॥ १५४ ॥

राग सारङ्ग ।

विश्वास एक राम नामको । मानत नहीं प्रतीति अनत ऐसो सुभाव मन वामको ॥ पढ़िबो परयो न छठी छमत ऋग,-यजुर अथर्वण सामको । व्रत तीरथ तप सुनि सहमत पचि,-मरै करै तन छाम-को ॥ कर्म जाल कलिकाल कठिन आधीन सुसाधित दामको । ज्ञान विराग योग जप तप भय, लोभ मोह कोह कामको ॥ सब दिन सब लायक भये गायक, रघुनायक गुण ग्रामको । बैठे नाम कामतरु तर डर,-कवन घोर घन घामको ॥ को जानै को जैहै यमपुर, को सुरपुर पर धामको । तुलसिहि बहुत भलो लागत जग,-जीवन राम गुलामको ॥ १५५ ॥

कलि नाम कामतरु रामको। दलनिहार दारिद दुकाल दुख, दोष घोर घन घामको॥ नाम लेत दाहिनो होत मन, वाम विधाता वामको। कहत मुनीश महेश महातम, उलटे सूधे नामको॥ भलो लोक परलोक तासु जाके, बल ललित ललामको। तुलसी जग जानियत नामते, शोच न कूच मुकामको॥ १६६॥

सेइये सुसाहेब राम सो। सुखद सुशील सुजान शूर शुचि, सुन्दर कोटिक काम सो॥ शारद शेष साधु महिमा कह, गुणगण गायक साम सो। सुमिरि सप्रेम नाम जासों रति, चाहत चन्द्र ललाम सो॥ गमन विदेश न लेश कलेशहु, सकुचत सकृत प्रणाम सो। साखी ताको विदित विभीषण, बैठो अविचल धाम सो॥ टहल सहल जन महल महल, जागत चारो युग याम सो। देखत दोष न खीझत रीझत, सुनि सेवक गुण ग्राम सो॥ जाके भजे तिलोक तिलक भे, त्रिजग योनि तन तामसो। तुलसी ऐसे प्रभुहि भजै नहिं,-ताहि विधाता वाम सो॥ १६७॥

राग नट।

कैसे देउँ नाथहि खोरि। काम लोलुप भ्रमत मन हरि, भगति परिहरि तोरि॥ बहुत प्रीति पुजाइबे पर, पूजिबे पर थोरि। देत सिख सिखयो न मानै, मूढ़ता असि मोरि॥ किये सहित सनेह जे अघ, हृदय राखे चोरि। सङ्ग वश किय शुभ सुनाये, सकल लोक निहोरि॥ करौं जो कछु धरौं सचि पचि, सुकृत शिला बटोरि। पैठि उर वरवश दयानिधि, दम्भ लेत अँजोरि॥ लोभ मनहिं नचाव कपि ज्यों, गरे आशा डोरि। बात कहौं बनाइ बुध ज्यों, वर विराग निचोरि॥ इतो पै तुम्हरो कहावत, लाज अँचई घोरि। निलजता पर रीझि रघुवर, देहु तुलसिहि छोरि॥ १५८॥

है प्रभु मेरोई सब दोष। शीलसिन्धु कृपाल नाथ अनाथ आरत पोष॥ वेष वचन विराग मन अघ, अवगुनानि को कोष। राम प्रीति प्रतीति पोलो, कपट करतब ठोष॥ राग रङ्ग कुसङ्गही सों, साधु

सङ्कति रोष । चहत केहरि यशहि सेइ शृगाल ज्यों खरगोष ॥ शम्भु सिखवन रसनहूँ नित, राम नामहिं घोष । दम्भहू कलि नाम कुम्भज, शोच सागर सोष ॥ मोद मङ्गल मूल अति अनुकूल निज निरयोष । राम नाम प्रभाव सुनि तुलसिहि परम सन्तोष ॥ १५९ ॥

मैं हरि पतित पावन सुने । मैं पतित तुम पतित पावन, दोउ बानक बने ॥ व्याध गणिका गज अजामिल, साखि निगमनि भने । और अधम अनेक तारे, जात कापै गने ॥ जानि नाम अजान लीन्हे, नरक यमपुर मने । दास तुलसी शरण आयो, राखिये आपने ॥ १६० ॥

राग मलार ।

तोसों प्रभु जोपै कहूँ कोउ होतो । तौ सहि निपट निरादर निशि दिन, रटि लटि अस घटि कोतो ॥ कृपा सुधा जल दानि मागिबो, कहो सो साँच निसोतो । स्वाति सनेह सलिल सुख चाहत, चित चातक

को पोतो ॥ काल करम वश मन कुमनोरथ, कबहुँ कबहुँ कछु भोतो। ज्यों मुद मय बसि मीन बारि तजि, उछरि भभरि लै गोतो ॥ जितो दुराव दास तुलसी उर, क्यों कहि आवत ओतो। तेरे राज राय दशरथके, लयो बयो बिनु जोतो ॥ १६१ ॥

राग रामकली।

ऐसो को उदार जग माहीं। बिनु सेवा जो द्रवै दीन पर, राम सरिस कोउ नाहीं ॥ जो गति योग विराग यतन करि, नहीं पावत मुनि ज्ञानी। सो गति दई गीध शबरी कहँ, प्रभु न बहुत करि मानी ॥ जो सम्पति दशशीश अरपि के, रावण शिव पहँ लीन्हीं। सो सम्पदा बिभीषण जन कहँ, सकुच सहित हरि दीन्ही ॥ तुलसिदास सब भांति सकल सुख, जो चाहसि मन मेरो। तौ भजु राम काम सब पूरण, करैं कृपानिधि तेरो ॥ १६२ ॥

एकै दानि शिरोमणि साँचो। जेहि याँच्यो सो याँचकता वश, फिरि बहु नाच न नाचो ॥ सब स्वा-

रथी असुर सुर नर मुनि, कोउ न देत बिनु पाये। कोशल पाल कृपालु कल्पतरु, द्रवत सकृत शिर नाये॥ हरिहु और अवतार आपने, राखी वेद बड़ाई। लै चाउर निधि दई सुदामहिं, यद्यपि बाल मिताई॥ कपि शबरी सुग्रीव बिभीषण, को नहिं कियो अयाची। अब तुलसिहि दुख देत दयानिधि, दारुण आश पिशाची॥ १६२॥

जानत प्रीति रीति रघुराई। नाते सब हाते करि राखत, राम सनेह सगाई॥ नेह निबाहि देह तजि दशरथ, कीरति अचल चलाई। ऐसेहु पितु ते अधिक गीध पर, ममता गुण गरुआई॥ तिय बिरही सुग्रीव सखा लखि, प्राण प्रिया बिसराई। रण परे बन्धु बिभीषणही को, शोच हिये अधिकाई॥ घर गुरु गृह प्रिय सदन सासुरे, भइ जब जहँ पहुनाई। तब तहँ कहि शबरी के फलनि की, रुचि माधुरी न पाई॥ सहज सरूप कथा मुनि बरनत, रहत सकुचि शिर नाई। केवट मीत कहे सुख मानत, वानर बन्धु

बड़ाई ॥ प्रेम कनौड़ो राम सरिस प्रभु, त्रिजग त्रिकाल न भाई। तेरो रिनी कह्यो कपि सों अस,-मानिहि को सेवकाई ॥ तुलसी राम सनेह शील लखि, जौ न भगति उर आई। तौ तोहि जनमि जाय जननी जड़, तन तरुणता गँवाई ॥ १६४ ॥

रघुवर रावरि इहै बड़ाई। निदरि गनी आदर गरीब पर, करत कृपा अधिकाई ॥ थके देव साधन करि सब, सपनेहुँ नाहिं दिये दिखाई। केवट कुटिल भालु कपि कौनप, कियो सकुल सग भाई ॥ मिलि मुनि वृन्द फिरे दंडक वन, सो चर्चौ न चलाई। बारहि बार गीध शबरी की, वरनत प्रीति सुहाई ॥ श्वान कहे ते किये पुर बाहर, यती गयन्द चढ़ाई। तिय निन्दक मति मन्द प्रजा रज, निज नय नगर बसाई ॥ एहि दरबार दीन को आदर, रीति सदा चलि आई। दीन दयाल दीन तुलसी की, काहु न सुरति कराई ॥ १६५ ॥

ऐसे राम दीन हितकारी। अति कोमल करुणा निधान बिनु,-कारण पर उपकारी ॥ साधन हीन

दीन निज अघ वश, शिला भई मुनि नारी । गृह ते गवनि परसि पद पावन, घोर शाप ते तारी ॥ हिंसा रत निषाद तामस नर, पशु समान वनचारी । भेंट्यो हृदय लगाइ प्रेम वश, नहिं कुल जाति विचारी ॥ यद्यपि द्रोह कियो सुरपति सुत, कहि न जाइ अति भारी । सकल लोक अवलोकि शोक हत, शरण गये भय टारी ॥ विहँग योनि आमिष अहार पर, गीध कवन व्रत धारी । जनक समान क्रिया ताकी निज, कर कारि बात सँवारी ॥ अधम जाति शबरी योषित सठ, लोक वेद ते न्यारी । जानि प्रीति दै दरश कृपा-निधि, सोउ रघुनाथ उधारी ॥ कपि सुग्रीव बन्धु भय व्याकुल, आयो शरण पुकारी । सहि न सके दारुण दुख जन के, हत्यो बालि सहि गारी ॥ रिपु को अनुज विभीषण निशिचर, कवन भजन अधिकारी । शरण गये आगे है लीन्हों, भेंट्यो भुजा पसारी ॥ अशुभ होइ जिनके सुमिरन से, वानर रीछ विकारी । वेद विदित पावन भये ते सब, महिमा नाथ तिहारी ॥ कहँ लगि कहौं दीन अगणित, जिन्हकी

तुम विपति भिखारी । कलिमल ग्रसित दास तुलसी पर, काहे कृपा बिसारी ॥ १६६ ॥

रघुपति भगति करत कठिनाई । कहत सुगम करनी अपार जानै सो जेहि बनिआई ॥ जो जेहि कला कुशल ताकहँ सो,-सुलभ सदा सुखकारी । सफरी सन्मुख जल प्रवाह सुरसरी, बहै गज भारी ॥ ज्यों शर्करा मिलै सिकता महँ, बल ते नहिं बिलगावै । अति रसज्ञ शूक्षम पिपीलिका, बिनु प्रयासही पावै ॥ सकल दृश्य निज उदर मेलि सोवै, निद्रा तजि योगी । सोइ हरि पद अनुभवै परम सुख, अतिशय द्वैत वियोगी ॥ शोक मोह भय हरष दिवस निशि, देश काल तहँ नाहीं । तुलसिदास यह दशा हीन, संशय निर्मूल न जाहीं ॥ १६७ ॥

जौपै रामचरण रति होती । तौ कत त्रिविध शूल निशि वासर, सहते विपति निसोती ॥ जो सन्तोष सुधा निशि वासर, सपनेहुँ कबहुँक पावै । तौ कत विषय विलोकि झूंठ जल, मन कुरङ्ग ज्यों

धावै ॥ जौ श्रीपति महिमा बिचारि उर, भजते भाव बढ़ाये। तौ कत द्वार द्वार कूकर ज्यों, फिरते पेट खलाये ॥ जे लोलुप भये दास आश के, ते सबही के चेरे। प्रभु विश्वास आश जीती जिन्ह, ते सेवक हरि केरे ॥ नहिं एक्को आचरण भजन-को, विनय करत हौं ताते। कीजे कृपा दास तुलसी पर, नाथ नाम के नाते ॥ १६८ ॥

जो मोहि राम लागते मीठे। तौ नवरस षटरस रस अनरस, ह्वै जाते सब सीठे ॥ वञ्चक विषय विविध तनु धरि, अनुभवे सुने अरु दीठे। यह जानत हौं हिय अपने, सपने न अघाइ उबीठे ॥ तुल-सिदास प्रभु सों एकहि बल, वचन कहत अति ढीठे। नाम कि लाज मानि करुणाकर, केहि न दिये करि चीठे ॥ १६९ ॥

यों मन कबहुँ तुमहिं न लाग्यो। ज्यों छल छाड़ि सुभाय निरन्तर, रहत विषय अनुराग्यो ॥ ज्यों चितई पर नारि सुने पातक प्रपञ्च घर घर

के। त्यों न साधु सुरसरि तरङ्ग निर्मल गुण गण रघुवर के॥ ज्यों नासा सुगन्ध रस वश रसना षट-रस रति मानी। राम प्रसाद माल झूंठन लगि, त्यों न ललकि ललचानी॥ चन्दन चन्द्रवदनि भूषण पट, ज्यों चह पांवर परस्यो। त्यों रघुपति पद पदुम परस को, तनु पातकी न तरस्यो॥ ज्यों सब भांति कुदेव कुठाकुर, सेयो वचन हियेहूं। त्यों न राम सुकृतज्ञ जे सकुचत, सकृत प्रणाम कियेहूं॥ चञ्चल चरण लोभ लागि लोलुप, द्वारद्वार जग बागे। राम सीय आश्रमनि चलत त्यों, भये न श्रमित अभागे॥ सकल अङ्ग पद विमुख नाथ मुख,-नाम कि ओट लई है। है तुलसिहि परतीति एक प्रभु,-मूरति कृपा मई है॥ १७०॥

कीजे मोको यमयातना मई। राम तुमसे शुचि सुहृत साहिबहि, मैं सठ पीठि दई॥ गर्भ बास दश मास पालि पितु मातु रूप हित कीन्हों। जड़हि विवेक सुशील खलहि अपराधिहि आदर

दीन्हों ॥ कपट करों अन्तर्यामिहु सों, अघ व्यापकहि दुरावों । ऐसेहु कुमति कुसेवक पर रघुपति न कियो मन बावों ॥ उदर भरों किङ्कर कहि बेच्यों,-विषयनि हाथ हियो है । मोसे वञ्चक को कृपाल छल,-छाडिके छोह कियो है ॥ पल पलके उपकार रावरे, जानि बूझि सुनि नीके । भिद्यो न कुलिशहु ते कठोर चित, कबहुँ प्रेम सिय पीके ॥ स्वामीकी सेवक हितता सब, कछु निज सांइ दोहाई । मैं मति तुला तौलि देख्यों भइ, मेरिहि दिशि गरुआई ॥ एतेहु पर हित करत नाथ मम,-करि आये अरु करि हैं । तुलसी अपनी ओर जानियत, प्रभुहि कनौड़ो भरि हैं ॥ १७१ ॥

कबहुँक हों एहि रहनि रहौंगो । श्री रघुनाथ कृपाल कृपाते, सन्त सुभाव गहौंगो ॥ यथा लाभ सन्तोष सदा काहू सों कछु न चहौंगो । परहित निरत निरन्तर मन क्रम,-वचन नेम निबहौंगो ॥ परुष वचन अति दुसह श्रवण सुनि, तेहि पावक

न दहौंगो। विगत मान सम शीतल मन पर,-गुण अवगुण न कहौंगो॥ परिहरि देह जनित चिन्ता दुख,-सुख सम बुद्धि सहौंगो। तुलसिदास प्रभु एहि पथ रहि, अविचल हरि भगति लहौंगो॥ १७२॥

नाहिन आवत और भरोसो। एहि कलिकाल सकल साधन तरु, है श्रम फलनि फरो सो॥ तप तीरथ उपवास दान मख, जेहि जो रुचै करो सो। पायहि पै जानिबो करम फल, भरि भरि वेद परोसो॥ आगम विधि जप याग करत नर, सरत न काज खरो सो। सुख सपनेहु न योग सिधि साधन, रोग वियोग धरो सो॥ काम कोह मद लोभ मोह मिलि ज्ञान विराग हरो सो। विगरत मन संन्यास लेत जल,-नावत आम घरो सो॥ बहु मत सुनि बहु पन्थ पुराननि,-जहां तहां झगरो सो। गुरु कह्यो राम भजन नीको मोहि, लगत राज डगरो सो॥ तुलसी बिनु परतीति प्रीति फिरि,-फिरि पचि मरै मरो सो। रामनाम बोहित भव सागर, चाहै तरन तरो सो॥ १७३॥

जाके प्रिय न राम वैदेही । सो छाँड़िये कोटि वैरी सम, यद्यपि परम सनेही ॥ तजे पिता प्रह्लाद बिभीषण,-बन्धु भरत महँतारी । हरि हित गुरु बलि पति व्रज बनितन्ह, भे जग मङ्गलकारी ॥ नातो नेह रामके मनियत, सुहृद सुसेव्य जहां लों । अञ्जन कहा आंखि जेहि फूटे, बहुतक कहों कहांलों ॥ तुलसी सो आपनो सकल बिधि, पूज्य प्राण ते प्यारो । जासों होइ सनेह रामपद, एतो मतो हमारो ॥ १७४ ॥

जौपै रहनि राम सों नाहीं । तो नर खर कूकर सूकर सम, जाय जियत जग माहीं ॥ काम क्रोध मद लोभ नीद भय, भूख प्यास सबहीके । मनुज देह सुर साधु सराहत, सो सनेह सिय पीके ॥ सूर सुजान सुपूत सुलक्षण, गनियत गुण गरूआई । बिनु हरि भजन इनारुन के फल, तजत नहीं करूआई ॥ कीरति कुल करतूति भूति भलि, शील सरूप सलोने । तुलसी प्रभु अनुराग रहित जस, सालन साग अलोने ॥ १७५ ॥

राख्यो राम से स्वामि सों, नीच नेह न नातो । एतो अनादर होतहू तोहि ते नाहिं हातो ॥ जोरे नित नाते नये, नेह फोकट फीके । देह के दाहक भले-ही, बने गाहक जी के ॥ अपने अपने को सबै, लोग चाहत नीको । मूल दूनहुँ को दयालु, दूलह प्रिय सी को ॥ जीवहु के जीवन नाथ, प्राणहु के पियारे । सुखहू के सुख राम सो,- तै निपट बिसारे ॥ कियो है करेंगे औसि, तोसे खल को भलो । ऐसे सुसाहेब राम सों, तूँ क्यों कुचाल चलो ॥ तुलसी तेरी भलाई, जोपै अजहुँ बूझै । राँड़ राउत होत है, रण फिरि के जूझै ॥ १७६ ॥

जो तुम त्यागहु हौं नाहिं त्यागों । परिहरि पाँय काहि अनुरागों ॥ सुखद सुप्रभु तुम सो जग माहीं । श्रवण नयन मन गोचर नाहीं ॥ हौं जड़ जीव ईश रघुराया । तुम माया पति हौं वश माया ॥ हौं तो कुयाचक स्वामि सुदाता । हौं कुपूत तुम हितु पितु माता ॥ जौ पै कहुँ कोउ बूझत बातो । तौ तुलसी बिनु मोल बिकातो ॥ १७७ ॥

भयहु उदास राम मेरे आश रावरी । आरत स्वारथी सब कहैं बात बावरी ॥ जीवन को दानि घन कहा ताहि चाहिये । प्रेम नेम के निबाहे, चातक सराहिये ॥ मीन ते न लाभ लेश, पानी पुण्य पीन को । जल बिनु थल कहां मीच,-बिनु मीन को ॥ बड़ेहि की ओट बलि-बांचि आये छोटे हैं । चलत खरे के सङ्ग जहाँ तहाँ खोटे हैं ॥ एहि दरबार भलो दाहिनेहू वाम को । मोको सुखदायक भरोसो राम नाम को ॥ कहत नशानी ह्वै है, हिये नाथ नीकी है। जानत कृपा निधान तुलसीके जी की है ॥ १७८ ॥

कहाँ जाउँ कासो कहौं कौन सुनै दीन की । त्रिभुवन तुही गति सब अङ्ग हीन की ॥ जग जगदीश घर घरनि घनेरे हैं । निराधार को अधार गुण गण तेरे हैं ॥ गजराज काज खगराज तजि धायो को । मोसे दोष कोश पोसे तोसे माय जायो को ॥ मोसे कूर कायर कुपूत कौड़ी आध को । किये बहु मोल तूँ करैया गीध श्राध को ॥ तुलसी की तेरेही बनाये

बालि बनैगी । प्रभु की विलम्ब अम्ब दोष दुख जनैगी ॥ १७९ ॥

वारक बिलोकि बलि कीजे मोहि आपनो । राय दशरथ के तूँ उथपन थापनो ॥ साहेब शरण पाल सबल न दूसरो । तेरो नाम लेतही सुखेत होत ऊसरो ॥ वचन करम तेरे मेरे मन गड़े हैं । देखे सुने जाने मैं जहान जेते बड़े हैं ॥ कौने कियो समाधान सनमान शिला को । भृगुनाथ सारिखो जितैया कौन लीला को ॥ मातु पितु बन्धु हित लोक वेद पाल को । बोल को अचल नत करत निहाल को ॥ सङ्ग्रही सनेह वश अधम असाध को । गीध शबरी को कहो करी है सराध को ॥ निराधार को अधार दीन को दयालु को । मीत कपि केवट रजनिचर भालु को ॥ रङ्क निर्गुणी नीच जे जे तैं निवाजे हैं । महाराज सुजन समाज ते विराजे हैं ॥ साँची विरदावली न बढ़ि कहि गई है । शील सिन्धु ढील तुलसी की बार भई है ॥ १८० ॥

केहू भाँति कृपासिन्धु मेरी ओर हेरिये। मोको और ठौर न सुटेक एक तेरिये॥ सहस शिला ते अति मति जड़ भई है। कासो कहौं कौने गति पाहनहिं दई है॥ पद राग याग चहौं कौशिक ज्यों कियो है। कलिमल दल देखि भारी भीति भियो है॥ करम कपीश बालि बली त्रास त्रस्यो हौं। चाहत अनाथ नाथ तेरी बाँह बस्यो हौं॥ महा मोह रावण विभीषण ज्यों हयो है। त्राहि तुलसीश त्राहि तिहूँ ताप तयो है॥ १८१॥

नाथ गुण गाथ सुनि होत चित चाउ सो। राम रीझबे की जानो भगति न भाउ सो॥ करम सुभाव काल ठाकुर न ठाँउ सो। सुधन न सुतन न सुमन सुआउ सो॥ जाँचो जल जाहि कहै अमिय पिआउ सो। कासो कहौं काहू सों न परत हिआउ सो॥ बाप बलि जाउँ आप करिये उपाउ सो। तेरेही निहारे परै हारेहू सुदाउ सो॥ तेरेही सुझाये सूझै असुझ सुझाउ सो। तेरेही बुझाये बूझै अबुझ बुझाउ

सो ॥ नाम अवलम्ब अम्बु दीन मीन राउ सो । प्रभु सों बनाइ कहै जीह जरि जाउ सो ॥ सब भांति बिगरी है एक सुबनाउ सो । तुलसी सुसाहिबहि दियो है जनाउ सो ॥ १८२ ॥

राग आसावरी ।

राम प्रीति की रीति आप नीके जनियत हैं । बड़े की बड़ाई करै छोटे की छोटाई दूरि, ऐसी विरदावली सु वेद मनियत हैं ॥ गीध को कियो सराध भीलनी के खाये फल, सोऊ साधु सभा भली भाँति भनियत हैं । शबरे आदरे लोक वेदहू आदरियत, योग ज्ञानहूं ते अति गरू गनियत हैं ॥ प्रभु की कृपा कृपालु कठिन कलिहु काल, महिमा समुझि उर माहिं अनियत हैं । तुलसी पराये वश भये रस अनरस, दीनबन्धु द्वारे हारि हठ ठनियत हैं ॥१८३॥

राम नाम के जपे जाइ जिय की जरनि । कलिकाल अपर उपाय ते अपाय भये, जैसे तम नासिबे को चित्र के तरनि ॥ करम कलाप परिताप

पाप खाने खग, ज्यों सुफूल फूले तरु फोकट फरनी। दम्भ लोभ लालच उपासना विनासि नीके, सुगति साधन भई उदर भरनि ॥ योग न समाधि निरु-पाधि न विराग ज्ञान, वचन विशेष वेष कहूं न करनि । कपट कुपथ कोटि कहनि रहनि खोटि, सकल सराहैं निज निज आचरनि ॥ मरत महेश उपदेश है कहा करत, सुरसरि तीर काशी धरम धरनि । राम नाम को प्रताप हर कहैं जपैं आप, युगयुग जानै जग वेदहू वरनि ॥ मति राम नामहीं सों रति राम नामहीं सों, गति राम नामहीं की विपत्ति हरनि । राम नाम सों प्रतीति प्रीति राखे कबहुंक, तुलसी ढरैंगे राम आपनी ढरनि ॥ १८४ ॥

लाज न लागत दास कहावत । सो आचरण विसारि शोच तजि, जो हरि तुम कहँ भावत ॥ सकल सङ्ग तजि भजत जाहि मुनि, जप तप योग बनावत । मोसम मन्द महा खल पांवर, कवन यतन तेहि पावत ॥ हरि निर्मल मल ग्रसित हृदय

असमञ्जस मोहि जनावत। जेहि सर काक कङ्क बक शूकर, क्यों मराल तहँ आवत॥ जाकी शरण जाइ कोविद दारुण त्रय ताप बुझावत। तहँ गये मद मोह लोभ अति, सरगहु मिटत न सावत॥ भव सरिता कहँ नाव सन्त यह, कहि औरनि समुझावत। हौं तिन्हसों हरि परम वैर करि, तुम सों भलो मनावत॥ नाहिन और ठौर मोकहँ ताते हठि नातो लावत। राखु शरण उदार चूड़ामणि, तुलसिदास गुण गावत॥ १८६॥

कवन यतन विनती करिये। निज आचरण विचारि हारि हिय,-मानि जानि डरिये॥ जेहि साधन हरि द्रवहु जानि जन, सो हठि परिहरिये। जाते विपति जाल निशि दिन दुख, तेहि पथ अनुसरिये॥ जानतहूँ मन वचन करम पर,-हित कीन्हे तरिये। सो विपरीत देखि पर सुख बिनु,-कारणही जरिये॥ श्रुति पुराण सब को मत यह सतसङ्ग सुदृढ़ धरिये। निज अभिमान मोह इरषा वश,

तिन्हहिं न आदरिये ॥ सन्तत सोइ प्रिय मोहि सदा जाते भव निधि परिये । कहौ अब नाथ कवन बल ते, संसार शोक हरिये ॥ जब कब निज करुणा सुभाव ते, द्रवहु तो निस्तारिये । तुलसिदास विश्वास आन नहिं, कत पचि पचि मरिये ॥ १८६ ॥

ताही ते आयों शरण सबेरे । ज्ञान विराग भगति साधन कछु, सपनेहुँ नाहिन मेरे ॥ लोभ मोह मद क्रोध बोध रिपु, फिरत रैन दिन घेरे । तिन्हैं मिले मन भयो कुपथ रत, फिरै तिहारेहि फेरे ॥ दोष निलय यह विषय शोक प्रद, कहत सन्त श्रुति टेरे । जानतहुँ अनुराग तहां अति, सो हरि तुम्हरेहि प्रेरे ॥ विष पियूष सम करहु अगिनि हिम, तारि सकहु विनु बेरे । तुम सम ईश कृपालु परम हित, पुनि न पइहौं हेरे ॥ अस जिय जानि रहौं सब तजि रघुवीर भरोसे तेरे । तुलसिदास यह विपत्ति बागुरा, तुमसों बनिहि निबेरे ॥ १८७ ॥

मैं तोहि अब जान्यों संसार । बांधि न सकहि

मोहि हरिके बल, प्रगट कपट आगार ॥ देखतही कमनीय कछू नाहिंन पुनि किये विचार । ज्यों कदली तरु मध्य निहारत, कबहुँ न निकरत सार ॥ तेरे लिये जनम अनेक मैं, फिरत न पायों पार । महा मोह मृग जल सरिता महँ, बोरयो बारहि बार ॥ सुनु खल छल बल कोटि किये बश,-होंहि न भगत उदार । सहित सहाय तहां बसु अब जेहि,-हृदय न नन्द कुमार ॥ तासों करहु चातुरी जो नहिं,-जानै मरम तुम्हार । सो परि मरै डरै रजु अहि ते, बूझै नहिं व्यवहार ॥ निज हित सुनु सठ हठ न करहि जो,-चहहि कुशल परिवार । तुलसिदास प्रभुके दासन्ह तजि,- भजहि जहां मद मार ॥ १८८ ॥

राग गौरी ।

राम कहत चलु राम कहत चलु, राम कहत चलु भाई रे । नाहित भव बेगारि परिहो पुनि,-छूटब अति कठिनाई रे ॥ बांस पुरान साज सब

अटकठ, सरल तिकोण खटोला रे । हमहिं दिहल करि कुटिल करम चँद, मन्द मोल बिनु डोला रे ॥ विषम कहार मार मद माते, चलहिं न पांव बटो रे। मन्द बलन्द अभेरा दलकन, पाइय दुख झकझोरे रे ॥ कांट कुराय लपेटन लोटन, ठांवहिं ठाव बझाऊ रे । जस जस चलिय दूरि तसतस, निज बास न भेंट लगाऊ रे ॥ मारग अगम सङ्ग नहिं सम्बल, नाउँ गाउँ कर भूला रे ॥ तुलसिदास भव त्रास हरहु अब,-होहु राम अनुकूला रे ॥ १८९ ॥

सहज सनेही राम सों तैं कियो न सहज सनेह । ताते भव भाजन भयो, सुनु अजहुं सिखावत एह ॥ ज्यों मुख मूकुर विलोकिये, अरु चित न रहै अनुहारि । त्यों सेवतहु निरापने, ये मातु पिता सुत नारि ॥ देइ सुमन तिल बासि के, तोहि खरि परिहरि रस लेत । स्वारथ हित भूतल भरे, इमि

---

१ टेढामेढा । २ सडा हुआ । ३ नीच । ४ यह शब्द फारसीका है; ऊँचा । ५ दरार । ६ दलदल । ७ पांव फसने योग्य कंकडी । ८ लपटनेवाली लता, वृक्ष । ९ झाडी ।

मन मेचक तन सेत ॥ कारि बीत्यो अब करतु है, करिबे हित मीत अपार । कतहुँ न कोउ रघुबीर सों, नित नेह निबाहनि हार ॥ जासों सब नातो फुरै, तासों न करी पहिचानि । ताते कछु समुझ्यो नहीं कहा लाभ कह हानि ॥ सांचों जान्यो झूंठ के, झूंठे कह सांचों जानि । कोन गयो को न जात है, को न जैहै करि हित हानि ॥ वेद कह्यो बुध कहत हैं, अरु हौंहुँ कहत हौं टेरि । तुलसी प्रभु सांचों हितू, तूँ हिय की आंखिन्ह हेरि ॥ १९० ॥

एक सनेही सांचिलो, जग केवल कोशल पाल । प्रेम कनौड़ो राम सों, प्रभु नहिं दूसरो दयाल ॥ तनु साथी सब स्वारथी,-हैं सुर व्यवहार सुजान । आरत अधम अनाथ को,-हित को रघुबीर समान ॥ नाद निठुर समचर शिखी, तिमि सलिल सनेह न सूर । शशि सरोग दिनकर बड़े, सुठि पयद प्रेम पथ कूर ॥ जाको मन जासौं बंधो, ताको सुखदायक सोइ । सरल शील साहेब सदा, सीतापति सरिस न कोइ ॥

सुनि सेवा सहि को करै, परिहरै को दूषण देखि । केहि दिवांन दिन दीन को, आदर अनुराग विशेखि ॥ खग शबरी पितु मातु ज्यों,- माने कपि को किय मीत । केवट भेंट्यो भरत ज्यों, ऐसो को पतित पुनीत ॥ देइ अभागहि भाग को, को राखै शरण समीत । वेद विदित विरदावली, कवि कोविद गावत गीत ॥ कैसउ पांवर पातकी, जेहि लई नाम की ओट । गांठी बांध्यो राम सो, परिख्यों न फेरि खर खोट ॥ मन मलीन कलि किल्बिषी, है सुनत जासु कृत काज । सो तुलसी किय आपनो, रघुवीर गरीब नेवाज ॥ १९१ ॥

जोपि जानकी नाथ सों, भौ नातो नेह न नीच । स्वारथ परमारथ कहा, कलि कुटिल बिगोयो बीच ॥ धरम वरण आश्रमनि के, पैयत पोथिही पुरान । करतब विनु वेष विलोकिये, ज्यों शरीर विनु प्राण ॥ वेद विदित साधन सबै, सुनियत दायक फल चारि ।

---

१ यह शब्द अबीं भाषा का है; सभा दरबार । २ पापी ।

राम प्रेम बिनु जानिबो, जस सर सरिता बिनु बारि॥ नाना पथ निर्वाणके, नाना विधान बहु भांति। तुलसी तूँ मेरे कहे, जपु राम नाम दिन राति॥१९२॥

अजहुँ आपने रामके, करतब समुझत हित होइ। कहँ तूँ कहँ कोशल धनी, तोहि कहा कहत सब कोइ॥ रीझि निवाज्यो कबहि तूँ, कब खीझि दई तोहि गारि। दर्पण बदन निहारि के, सुविचारु मान हिय हारि॥ बिगरी जनम अनेक की, सुधरत पल लगै न आधु। पाहि कृपानिधि प्रेम सों, कहे को न राम किय साधु॥ बालमीक केवट कथा, कपि भील भालु सनमान। सुनि सन्मुख जो न राम सों, तेहि को उपदेशहि ज्ञान॥ का सेवा सुग्रीव की, का प्रीति रीति निरवाह। जासु बन्धु वध व्याध ज्यों, सो सुनत सुहात न काहु॥ भजन विभीषण को कहा, फल कहा दियो रघुराज। राम गरीब निवाज के, बाडे बाँह बोल की लाज॥ जपहि नाम रघुनाथ को, चरचा न दूसरी

चालु । सुमुख सुखद साहब सुधी, समरथ कृपाल नत पालु ॥ सजल नयन गद्गद गिरा, गहबर मन पुलक शरीर । गावत गुण गण राम के, केहि की न मिटी भव भीर ॥ प्रभु कृतज्ञ सर्वज्ञ हैं, परिहरु पाछिली गलानि । तुलसी तोसों राम सों, कछु नइ न जान पहिचानि ॥ १९३ ॥

जौ अनुराग न राम सनेही सों । तौ लह्यो लाहु कहा नर देही सों ॥ जो तनु धरि परिहरि सब सुख भय, सुमति राम अनुरागी । सो तनु पाइ अघाइ किये अघ, अवगुण अधम अभागी ॥ ज्ञान विराग योग जप तप मख, जग मुद मग नहिं थोरे । राम प्रेम बिनु नेम जाय जस, मृगजल जलधि हिलोरे ॥ लोक बिलोकि पुराण वेद सुनि, समुझि बूझि गुरु ज्ञानी । प्रीति प्रतीति राम पद पङ्कज, सकल सुमङ्गल खानी ॥ अजहुँ जानि जिय मानि हारि हिय, होइ पलक महँ नीको । सुमिरु सनेह सहित हित रामहिं, मानु मतो तुलसी को ॥ १९४ ॥

बलि जाउँ हौं राम गोसाँई । कीजिय कृपा आपनी नाँई ॥ परमारथ सुरपुर साधन सब, स्वारथ सुखद भलाई । कलि सकोपि लोपी सुचाल निज,-कठिन कुचाल चलाई ॥ जहँ जहँ चित चितवत हित तहँ निज,-नव विषाद अधिकाई । रुचि भावती भभरि भागहि समुहाहिं अमित अनभाई ॥ आधि मगन मन व्याधि विकल तनु, वचन मलीन झुठाई । एतेहु पर तुम सों तुलसी की, सकल सनेह सगाई ॥ ९८ ॥

काहे को फिरत मन करत बहु यतन, मिटै न दुख विमुख रघुकुल बीर । कीजो जो कोटि उपाइ त्रिविध ताप न जाइ, कह्यो जो भुज उठाइ मुनिवर कीर ॥ सहज टेव विसारि तुहीं धों देखु विचारि, मिलै न मथत बारि घृत बिनु छीर । समुझि तजहि भ्रम भजहि पद युगम, सेवत सुगम गुण गहन गँभीर ॥ आगम निगम ग्रन्थ ऋषि मुनि सुर सन्त, सबही को एक मत सुनु मतिधीर । तुलसीदास

पियास मरै पशु बिनु प्रभु, यद्यपि रहै निकट सुर-सरि तीर ॥ १९६ ॥

नाहिंन चरण रति ताही तें सहौं बिपति, कहत श्रुति सकल मुनि मति धीर । बसै जो शशि उछङ्ग सुधा स्वादित कुरङ्ग, ताहि कि भ्रम निरखि रवि-कर नीर ॥ सुनिय नाना पुरान मिटत नाहिं अज्ञान, पढ़िय न समुझिय जिमि खग कीर । बूझत बिनहिं पास सेमर सुमन आस, करत चरित तेइ फल बिनु हीर ॥ कछु न साधन सिधि जानों न निगम बिधि, नहिं जप तप बश मन न समीर । दास तुलसी भरोस परम करुणा कोश, प्रभु हरिहैं बिषम तव भव भीर ॥ १९७ ॥

मन पछतैहै अवसर बीते । दुर्लभ देह पाइ हरि पद भजु, करम बचन अरु ही ते ॥ सहसबाहु दशवदन आदि नृप, बचे न काल बली ते । हम हम करि धन धाम सँवारे, अन्त चले उठि रीते ॥ सुत बनितादि जानि स्वारथ रत, न करु नेह

सबही ते । अन्तहु तोहि तजेंगे पाँवर, तूँ न तजै अबही ते ॥ अब नाथहि अनुराग जागु जड़, त्यागु दुराशा जी ते । बुझै न काम अगिनि तुलसी कहुँ, विषय भोग बहु घी ते ॥ १९८ ॥

काहे को फिरत मूढ़ मन धायो । तजि हरि चरण सरोज सुधारस, रवि कर जल लय लायो ॥ त्रिजग देव नर असुर अपर जग,-योनि सकल भ्रमि आयो । गृह बनिता सुत बन्धु भये बहु,-मातु पिता जिन जायो ॥ जाते निरय निकाय निरन्तर, सो इन तोहि सिखायो । तव हित होइ कटै भव बन्धन, सो मग तौ न बतायो ॥ अजहुँ विषय कहँ यतन करत, यद्यपि बहु विधि डहँकायो । पावक काम भोग घृत ते सठ, कैसे परत बुझायो ॥ विषय हीन दुख मिलै विपति अति, सुख संपनेहुँ नहिं पायो । उभय प्रकार प्रेत पावक ज्यों, धन दुख प्रद श्रुति गायो ॥ छिन छिन छीन होत जीवन दुर्लभ, तनु वृथा गँवायो । तुलसिदास हरि भजहि आस तजि, काल उरग जग खायो ॥ १९९ ॥

तॉवे सों पीठि मनहुँ तन पायो । नीच मीच जानत न शीश पर, ईश निपट बिसरायो ॥ अवनि रवनि धन धाम सुहृद सुत, को न इनहिं अपनायो । काके भये गये सँग काके, सब सनेह छल छायो ॥ जिन्ह भूपनि जग जीति बाँधि यम, अपनी बाँह बसायो । तेऊ काल कलेऊ कीन्हे, तूँ गनती कब आयो ॥ देखि बिचारि सार का साँचो,-कहा निगम निज गायो । भजहि न अजहुँ समुझि तुलसी तेहि, जेहि महेश मन लायो ॥ २०० ॥

लाभ कहा मानुष तनु पाये । काय वचन मन सपनेहु कबहुँक, घटत न कार्य पराये ॥ जो सुख सुरपुर नरक गेह वन, आवत बिनहिं बुलाये । तेहि सुख कहँ बहु यतन करत मन,-समुझत नाहिं समुझाये ॥ पर दारा पर द्रोह मोह वश, किये मूढ़ मन भाये । गरभ वास दुख राशि यातना, तीव्र बिपति बिसराये ॥ भय निद्रा मैथुन अहार सब,-के समान जग जाये । सुर दुर्लभ तनु धरि न भजे हरि, मद

अभिमान गँवाये ॥ गई न निज पर बुद्धि शुद्ध ह्वै, रहे न राम लय लाये। तुलसिदास यहि अवसर बीते, का पुनि के पछिताये ॥ २०१ ॥

काज कहा नर तनु धरि सार्यो। पर उपकार सार श्रुति को सो, धोखेहुँ में न विचार्यो ॥ द्वैत मूल भय शूल शोक फल, भव तरु टरै न टार्यो। राम भजन तीछन कुठार लै, सो नहिं काटि निवार्यो ॥ संशय सिन्धु नाम बोहित भजि, निज आतमा न तार्यो। जनम अनेक विवेक हीन बहु, योनि भ्रमत नहिं हार्यो ॥ देखि आनकी सहज सम्पदा, द्वेष अनल मन जार्यो। सम दम दया दीन पालन शीतल हिय हरि न सँभार्यो ॥ प्रभु गुरु पिता सखा रघुपति मैं, मन क्रम वचन बिसार्यो। तुलसिदास यहि आश शरण राखिहि जेहि गीध उधार्यो ॥ २०२ ॥

श्रीहरि गुरु पद कमल भजहु मन तजि अभिमान। जेहि सेवत पाइय हरि, सुख निधान भगवान ॥

परिवा प्रथम प्रेम बिनु, राम मिलन अति दूरि।
यद्यपि निकट हृदय निज, रहे सकल भरपूरि॥ दुइज द्वैत मत छाँड़ि चरहि, महि मण्डल धीर। बिगत मोह माया मद, हृदय सदा रघुबीर॥ तीज त्रिगुण पर परम पुरुष श्रीरमण मुकुन्द। गुण सुभाव त्यागे बिनु, दुर्लभ परमानन्द॥ चौथि चारि परिहरहु बुद्धि मन चित अहँकार। बिमल बिचार परम पद, निज सुख सहज उदार॥ पाँचइँ पांच परस रस, शब्द गन्ध अरु रूप। इन कर कहा न कीजिय, बहुरि परब भव कूप॥ छठि षड्वर्ग करिय जय, जनक सुता पति लागि। रघुपति कृपा बारि बिनु, नहिं बुताइ लोभागि॥ सातैं सप्तधातु निर्मित तनु करिय बिचार। तेहि तन केर एक फल, कीजिय पर उपकार॥ आठइँ आठ प्रकृति पर, निर्विकार श्रीराम। केहि प्रकार पाइय हरि, हृदय बसहिं बहु काम॥ नवमी नवद्वार पुर, बसि न आपु भल कीन। ते नर योनि अनेक भ्रमत दारुण दुख हीन॥ दसइँ दसहु कर संयम, जो न करिय जिय

जानि। साधन वृथा होइ सब, मिलहिं न सारँग पानि॥ एकादशी एक मन, वश कै सेवहु जाइ। सो व्रत कर फल पावै, आवागमन नसाइ॥ द्वादसि दान देहु अस, अभय होइ त्रयलोक। पर हित निरत सुपारन, बहुरि न व्यापै शोक॥ तेरसि तीनि अवस्था, तजहु भजहु भगवन्त। मन क्रम वचन अगोचर, व्यापक व्याप्य अनन्त॥ चौदसि चौदह भुवन अचर चर रूप गुपाल। भेद गये बिनु रघु-पति, अति न हराहिं जग जाल॥ पूनो प्रेम भगति रस, हरि रस जानहिं दास। सम शीतल गतमान ज्ञानरत विषय उदास॥ त्रिविध शूल होलिय जारिय खेलिय अस फाग। जो जिय चहसि परम सुख, तौ एहि मारग लाग॥ श्रुति पुराण बुध सम्मत चाँचरि चरित मुरारि। करि विचार भव तरिय परिय न कबहुँ यम धारि॥ संशय शमन दमन दुख, सुख निधान हरि एक। साधु कृपा बिनु मिलहिं न, करिय उपाय अनेक॥ भव सागर कहँ

नाव शुद्ध सन्तन्ह के चरण । तुलसिदास प्रयास बिनु, मिलहिं राम दुख हरण ॥ २०३ ॥

राग कान्हरा ।

जौं मन लागै राम चरण अस । देह गेह सुत वित कलत्र महँ, मगन होत बिनु यतन किये जस ॥ द्वन्द्व रहित गत मान ज्ञान रत, विषय बिरत खटाई नानाकस । सुख निधान सुजान कोशल पति, ह्वै प्रसन्न कहु क्यों न होहिं बस ॥ सर्व भूत हित निर्व्यलीक चित, भक्ति प्रेम दृढ़ नेम एक रस । तुलसिदास यह होइ तबहि जब, द्रवै ईश जेहि हते शीशदस ॥ २०४ ॥

जौं मन भज्यो चहै हरि सुरतरु । तौ तजि विषय विकार सार भजि, अजहूँ जो मैं कहौं सोइ करु ॥ सम सन्तोष विचार विमल अति, सत-सङ्गति चारिहु दृढ़ कै धरु । काम क्रोध अरु लोभ मोह मद,-राग द्वेष निशेष करि परिहरु ॥ श्रवण कथा मुख नाम हृदय हरि, शिर प्रणाम सेवा कर

अनुसरु । नयनन्ह निरखि कृपा समुद्र हरि, अग जग रूप भूप सीता वरु ॥ इहै भगति वैराग्य ज्ञान यह, हरि तोषन यह शुभ व्रत आचरु । तुलसिदास शिव मत मारग यह, चलत सदा सपनेहुँ नाहिंन डरु ॥ २०५ ॥

नाहिंन शरण लायक दूजो कोउ, श्री रघुपति सम विपति निवारन । काको सहज सुभाव दास वश, काहि प्रणत पर प्रीति अकारन ॥ जन गुण अलप गनत सुमेरु करि, अवगुण कोटि विलोकि विसारन । परम कृपालु भगत चिन्तामणि, विरद पुनीत पतित जन तारन ॥ सुमिरत सुलभ दास दुख सुनि हरि, चलत तुरत पट पीत सँभार न । साखि पुराण निगम आगम सब,-जानत द्रुपद सुता अरु वारन ॥ जाको यश गावत कवि कोविद, जिनके लोभ मोह मद मार न । तुलसिदास तजि आश सकल भजु, कोशलपति मुनि वधू उधारन ॥२०६॥

भजिवे लायक सुखदायक रघुनायक सरिस

शरण प्रद नाहिन। आनद भवन दुवन दुख दोषनि, रमा रमन गुण गनत सिराहिं न॥ आरत अधम कुजाति कुटिल खल, पतित सभीत कहूं जे समाहिं न। सुमिरत नाम विवशहू वारक, पावत सो पद जहँ सुर जाहिं न॥ जेहि पद कमल लुब्ध मुनि मधुकर, विरति जे परम सुगतिहु लोभाहिं न। तुलसिदास सठ तेहि न भजसि कस, कारुणीक जो अनाथहि दाहिन॥ २०७॥

राग कल्याण।

नाथ सों कौन विनती कहि सुनावों। त्रिविध अनगनित अवलोकि अघ आपने, शरण सन्मुख होत सकुचि शिर नावों॥ विरचि हरि भक्त को वेष वर टाटिका, कपट दल हरित पल्लवनि छावों। नाम लगि लाइ लासा ललित वचन कहि, व्याध ज्यों विषय विहँगनि बझावों॥ कुटिल शतकोटि मम रोम पर वारियहि, साधु गनती में पहिलेहि गनावों। परम बर्बर खर्ब गर्ब पर्वत चढ़्यो, अज्ञ सर्वज्ञ जन

मणि जनावों ॥ सांच किधौं झूंठ मोहि कहत कोउ कोउ राम, रावरो हौंहु तुम्हरो कहावों । विरद की लाज करि दास तुलसिहि देव, लेहु अपनाइ जनि देहु बावों ॥ २०८ ॥

नाहिंनै नाथ अवलम्ब मोहि आनकी । करम मन वचन प्रण सत्य करुणानिधे, एक गति राम भव-दीय पदत्रान की ॥ कोह मद मोह ममतायतन जानि मन, बात नाहिं जात कहि ज्ञान विज्ञान की । काम सङ्कल्प उर निरखि बहु वासनाहिं, आस नाहिं एकहु आंक निर्वान की ॥ वेद बोधित कर्म धर्म बिनु अगम अति, यदपि जिय लालसा अमरपुर जानकी । सिद्ध सुर मनुज दनुजादि सेवत कठिन द्रवहिं हठ योग दिय भोग बलि प्रान की ॥ भक्ति दुर्लभ परम शम्भु शुक मुनि मधुप, प्यास पद कञ्ज मकरन्द मधु पान की । पतित पावन सुनत नाम विश्राम कृत, भ्रमित पुनि समुझि चित ग्रन्थि अभिमान की ॥ नरक अधिकार मम घोर संसार

तम,-कूप काढ़ि भूप मोहि शक्ति आपान की। दास तुलसी सोच त्रास नहिं गनत मन, समुझि गुह गीध गज ज्ञाति हनुमान की ॥ २०९ ॥

और कहँ ठौर रघुवंश मणि मेरे। पतित पावन प्रणत पाल अशरण शरण, बाँकुरे विरद विरदैत केहि केरे॥ समुझि जिय दोष अति रोष करि राम जेहि,-करत नहिं कान विनती वदन फेरे। तदपि ह्वै निडर हों कहों करुणासिन्धु, क्यों वरहि जात सुनि बात विनु हेरे॥ मुख्य रुचि होत बसिबे को पुर रावरे, राम तेहि रुचिहि कामादि गण घेरे। अगम अपवर्ग अरु स्वर्ग सुकृतैक फल, नाम बल क्यों बसों यम नगर नेरे॥ कतहुँ नहिं ठाउँ कहँ जाउँ कोशलनाथ, दीन वित हीन हों विकल विनु डेरे। दास तुलसिहि बास देहु अब करि कृपा, बसत गज गीध व्याधादि जेहि खेरे ॥ २१० ॥

कबहुँ रघुवंश मणि सो कृपा करहुगे। जेहि कृपा व्याध गज विप्र खल नर तरे, तिन्हहिं सम मानि

मोहि नाथ उद्धरहुगे ॥ योनि बहु जन्मि किय कर्म खल विविध विधि, अधम आचरण कछु हृदय नहिं धरहुगे । दीन हित अजित सर्वज्ञ समरथ प्रणत,-पाल चित मृदुल निज गुणनि अनुसरहुगे ॥ मोह मद मान कामादि खल मण्डली, सकुल निर्मूल करि दुसह दुख हरहुगे । योग जप ज्ञान विज्ञान ते अधिक अति, अमल दृढ़ भक्ति दै परम सुख भर-हुगे ॥ मन्द जन मौलि मणि सकल साधन हीन, कुटिल मन मलिन जिय जानि जो डरहुगे । दास तुलसी वेद विदित विरदावली, विमल यश नाथ केहि भाँति विस्तरहुगे ॥ २११ ॥

राग केदारा ।

रघुपति विपति दवन । परम कृपालु प्रणत प्रति पालक, पतित पवन ॥ क्रूर कुटिल कुल हीन दीन अति, मलिन यवन । सुमिरत नाम राम पठये सब, अपने भवन ॥ गज पिङ्गला अजामिल से खल, गनै कवन । तुलसिदास प्रभु केहि न दीन्ह गति, सीय रवन ॥ २१२ ॥

हरि सम आपदा हरन । नहिं कोउ सहज कृपालु दुसह दुख,-सागर तरन ॥ गज निज बल अवलोकि कमल गहि, गयो जु सरन । दीन वचन सुनि चले सुनाभ धरन ॥ द्रुपद सुता को लग्यो दुशासन, नगन करन । हा हरि पाहि कहत पूरे पट, विविध बरन ॥ इहै जानि सुर नर मुनि कोविद, सेवत चरन । तुलसिदास प्रभु को न अभय कियो, नृग उद्धरन ॥ २१२ ॥

राग कल्याण ।

ऐसी कौन प्रभु की रीति । विरद हेतु पुनीत परिहरि, पाँवरनि पर प्रीति ॥ गई मारन पूतना कुच,-कालकूट लगाइ । मातु की गति दई ताहि, कृपालु यादवराइ ॥ काम मोहित गोपिकन्ह पर, कृपा अतुलित कीन्ह । जगत पिता विरञ्चि जिन्हके, चरण की रज लीन्ह ॥ नेम ते शिशुपाल दिन प्रति, देत गनि गनि गारि । कियो लीन सु आपु में हरि, राज सभा मझारि ॥ व्याध चित दै

चरण मारयो, मूढ मति मृग जानि। सो सदेह सुलोक पठयो, प्रगट करि निज बानि॥ कौन तिन्हकी कहै जिनके, सुकृत अरु अघ दोउ। प्रगट पातक रूप तुलसी, शरण राख्यो सोउ॥ २१४॥

श्री रघुबीर की यह बानि। नीचहू सो करत नेह, सुप्रीति मन अनुमानि॥ परम अधम निषाद पाँवर, कवन ताकी कानि। लियो सो उर लाइ सुत ज्यों, प्रेम को पहिचानि॥ गीध कवन दयालु जो विधि,-रच्यो हिंसा सानि। जनक ज्यों रघुनाथ ताकहुँ, दियो जल निज पानि॥ प्रकृति मलिन कुजाति शबरी, सकल अवगुण खानि। खात ताके दिये फल अति,-रुचि बखानि बखानि॥ रजनिचर अरु रिपु विभीषण, शरण आयो जानि। भरत ज्यों उठि ताहि भेंटत, देह दशा भुलानि॥ कवन सुभग सुशील वानर, जिन्हहिं सुमिरत हानि। किये ते सब सखा पूजे, भवन अपने आनि॥ राम सहज कृपालु कोमल, दीन हित दिन दानि। भजहि ऐसे प्रभुहि तुलसी,-कुटिल कपट न ठानि॥ २१५॥

हरि तजि और भजिये काहि। नाहिंन कोउ राम सो ममता प्रणत पर जाहि॥ कनककशिपु विरंचि को जन, करम मन अरु बात। सुतहि दुख-वत विधि न बरज्यो, काल के घर जात॥ शम्भु सेवक जान जग बहु,-बार दिय दसशीश। करत राम विरोध सो सपनेहुँ न हटक्यो ईश॥ और देवन्ह की कहा कहौं, स्वारथहि के मीत। कबहुँ काहु न राखि लियो कोउ, शरण गये सभीत॥ को न सेवत देत सम्पति, लोकहू यह रीति। दास तुलसी दीन पर इक,-रामही की प्रीति॥ २१६॥

जो पै दूसरो कोउ होइ। तौ हौं बारहि बार प्रभु कत,-दुख सुनावौं रोइ॥ काहि ममता दीन पर केहि,-पतित पावन नाम। पापमूल अजामिलहि को,-दियो अपनो धाम॥ रहे शम्भु विरञ्चि सुरपति लोकपाल अनेक। शोक सरि बूड़त करीशहि, दई काहु न टेक॥ विपुल भूपति सदसि महँ नर,-नारि कहि प्रभु पाहि। सकल समरथ रहे काहु न, बसन दीन्हों ताहि॥ एक मुख क्यों कहौं करुणा,-

सिन्धु के गुण गाथ। भक्तहित धरि देह काह न, कियो कोशलनाथ॥ आपु से कहुँ सौंपिये मोहि, जोपै अधिक घिनात। दास तुलसी और विधि क्यों, चरण परिहरि जात॥ २१७॥

कबहुँ दिखाइहो हरि चरण। शमन सकल कलेश कलिमल, सकल मङ्गल करण॥ शरद भव सुन्दर तरुण तर, अरुण वारिज वरण। लच्छि लालित ललित करतल, छबि अनूपम धरण॥ गङ्गधर अनङ्ग अरि प्रिय, कपट बटु बलि छरण। विप्रतिय नृग बधिक के दुख,-दोष दारुण दरण॥ सिद्ध सुर मुनि वृन्द वन्दित, सुखद सब कहँ शरण। सकृत उर आनत जिन्हहिं जन,-होत तारण तरण॥ कृपा-सिन्धु सुजान रघुपति, प्रणत आरति हरण। दरश आस पियास तुलसी,-दास चाहत मरण॥ २१८॥

द्वारे भोरही को आज। रटत रारिहा आरि और न, कौरही के काज॥ कलि कराल दुकाल दारुण, सब कुभाँति कुसाज। नीच जन मन ऊँच जैसी,

कोढ मैं की खाज ॥ हहरि हिय मैं सदय बूझ्यों, साधु साधु समाज । मोहु से कहुँ कतहुँ कोउ तिन्ह, कह्यो कोशलराज ॥ दीनता दारिद्र दलन को, कृपा वारिधि बाज । दानि दशरथ राय को तुम, बानइत शिरताज ॥ जनम को भूखो भिखारी,-हौं गरीब नेवाज । पेट भरि तुलसिहि जेंवाइय, भक्ति सुधा सुनाज ॥ २१९ ॥

करिय सँभार कोशलराय । और ठौर न और गति अवलम्ब नाम बिहाय ॥ बूझि अपनी आपनो हित, आप बाप न माय । राम राउर नाम गुरु सुर, स्वामि सखा सहाय ॥ राम राज न चलै मानस,-मलिन के छल छाय । कोपि तेहि कलिकाल कायर, मुएहि घालत घाय ॥ लेत केहरि को बैर ज्यों, भेक हति गोमाय । त्योंहि राम गुलाम जानि, निकाम देत कुदाय ॥ अकनि याके कपट करतब, अमित अनय अपाय । सुखी हरि पुर बसत होत परीक्षितहि पछताय ॥ कृपासिन्धु विलोकिये जनु, मन की साँसति साय । शरण आयो देव दीन दयाल

देखन पाय ॥ निकट बोलि न बरजिये बलि,-जाउँ हनिय न हाय। देखिहैं हनुमान गोमुख, नाहरनि के न्याय ॥ अरुण मुख भ्रू बिकट पिङ्गल, नयन रोप कषाय। वीर सुमिरि समीर को घटिहै चपल चित चाय ॥ विनय सुनि विहँसे अनुज सों, बचनके कहि भाय। भलि कही कह्यो लषनहूँ हँसि, बने सकल बनाय ॥ दई दीनहिं दाद सो सुनि, सुजन सदन बधाय। मिटे सङ्कट शोच पोच प्रपञ्च पाप निकाय ॥ पेखि प्रीति प्रतीति जन पर, अगुण अनघ अमाय। दास तुलसी कहत मुनि गण, जयति जय उरगाय ॥ २२० ॥

कृपाहीं को पन्थ चितवत, दीन हौं दिन राति। होइ धौं केहि काल दीन,-दयाल जानि न जाति ॥ सगुण ज्ञान विराग भक्ति, सुसाधननि की पांति। भजी विकल बिलोकि कलि अघ,-अवगुणनि की थाति ॥ अति अनीति कुरीति भइ भुइँ, तरनिहुँ ते ताति। जाउँ कहँ बलिजाउँ कहुँ नाहिं,-ठाउँ मति अकुलाति ॥ आपु सहित न आपनो कोउ,

बाप कठिन कुभाँति । श्याम घन सींचिये तुलसी,-शालि सफल सुखाति ॥ २२१ ॥

बलिजाउँ और कासो कहौं । सद्गुण सिन्धु स्वामि सेवक हित, कहुँ न कृपानिधि सों लहौं ॥ जहँजहँ लोभ मोह लालच वश, निजहित चित चाहनि चहौं । तहँतहँ तरनि तकत उलूक ज्यों, भटकि कुतरु कोटर गहौं ॥ काल सुभाव करम विचित्र फल,-दायक सुनि शिर धुनि रहौं । मोकहँ सकल सदा एकहि रस, दुसह दाह दारुण दहौं ॥ उचित अनाथ होइ दुख भाजन, भयो नाथ किङ्कर न हौं । अब रावरो कहाइ न बूझिय, शरणपाल साँसति सहौं ॥ महाराज राजीव विलोचन, मगन पाप सन्ताप हौं । तुलसी प्रभु जबतब जेहि तेहि विधि, राम निबाहे निरबहौं ॥ २२२ ॥

आपनो कबहुँ करि जानिहौ । राम गरीब निवाज राजमणि, विरद लाज उर आनिहौ ॥ शील सिन्धु सुन्दर सब लायक, समरथ सद्गुण खानि हौ । पाले

हो पालत पालहुगे, प्रणत प्रेम पहिचानिहो ॥ वेद पुराण कहत जग जानत, दीनदयालु दिन दानि हो। कहि आवत बलिजाउँ मनहुँ मम,-बार बिसारे बानि हो ॥ आरत दीन अनाथनि के हित, मानत लौकिक कानि हो। है परिणाम भलो तुलसी को, शरणागत भय मानि हो ॥ २२३ ॥

रघुबरहि कबहुँ मन लागिहै। कुपथ कुचाल कुमति कुमनोरथ, कुटिल कपट कब त्यागिहै ॥ जानत गरल अमिय विमोह बश, अमिय गनत करि आगि है। उलटी रीति प्रीति अपने की, तजि प्रभु पद अनुरागिहै ॥ आखर अर्थ मंजु मृदु मोदक, राम प्रेम पगि पागिहै। अस गुण गाइ रिझाइ स्वामि सों, पाइहि जो मुहँ मागिहै ॥ तूँ एहि बिधि सुख सेज सोइहै, जिय कि जरनि भूरि भागिहै। रामप्रसाद दास तुलसी उर, रामभक्ति जुग जागि है ॥ २२४ ॥

भरोसो और आइहै उर ताके। कै कहुँ लहै

राम सो साहिब, कै अपने बल जाके॥ कै कलि-काल कराल न सूझत, मोह मार मद छाके। कै सुनि स्वामि सुभाउ न रह्यो चित, जो हित सब अँग थाके॥ हौं जानत भलि भाँति अपनपौ प्रभु सों सुन्यों न साके। उपल भील खग मृग रजनीचर, भले भे करतब काके॥ मोको भयो नाम सुरतरु सों, राम कृपालु कृपा के। तुलसी सुखी निशोच राज ज्यों, बालक माय बबा के॥ २२९॥

भरोसो जाहि दूसरो सो करो। मोको त राम क नाम कल्पतरु, कलि कल्याण फरो॥ करम उपासन ज्ञान वेद मत, सब सब भाँति खरो। मोहि तौ सावन के अन्धहि ज्यों, सूझत रङ्ग हरो॥ चाटत रह्यो श्वान पातरि ज्यों, कबहुँ न पेट भरो। सो हौं सुमिरत नाम सुधारस, पेखत परसि धरो॥ स्वारथ औ परमारथहू को, नहिं कुञ्जरो नरो। सुनियत सेतु पयोधि पषाणनि, करि कपि कटक तरो॥ प्रीति प्रतीति जहाँ जाकी तहँ,-ताको काज सरो। मेरे माय बाप दोउ आखर, हौं शिशु

अरनि अरो ॥ शङ्कर साखि जो राखि कहौं कछु, तौ जरि जीह गरो । अपनो भलो राम नामहिं ते, तुलसिहि समुझि परो ॥ २२६ ॥

नाम राम रावरो हित मेरे । स्वारथ परमारथ साथिन सों, भुज उठाइ कहौं टेरे ॥ जननि जनक तज्यो जन्मि करम बिनु, बिधिहु सृज्यो अवडेरे । मोहुसे कोउ कहत राम को, सो प्रसङ्ग केहि केरे ॥ फिरे ललात बिनु नाम उदर लगि, दुखहु दुखित मोहि हेरे । नाम प्रसाद लहत रसाल फल, अब हौं बबुर बहेरे ॥ साधत साधु लोक परलोकहि, सुनि गुनि यतन घनेरे । तुलसी के अवलम्ब नामको, एक गांठि कइ फेरे ॥ २२७ ॥

प्रिय राम नाम ते जाहि न रामो । ताको भलो कठिन कलिकालहु, आदि मध्य परिणामो ॥ सकुचत समुझि नाम महिमा मद,-मोह लोभ कोह कामो । राम नाम जप निरत सुजन पर, करत छांह घोर घामो ॥ नाम प्रभाव सही जो कहै कोउ,

शिला सरोरुह नामो । जो सुनि सुमिरि भाग भाजन भइ, सुकृत शील भील भामो ॥ बालमी-करु अजामिल के कछु, हुतो न साधन सामो । उलटे पलटे नाम महातम, गुञ्जनि जितो ललामो ॥ राम ते अधिक नाम करतब जेहि, किये नगर गत ग्रामो । भये बजाइ दाहिने जो जपि, तुलसिदास से वामो ॥ २२८ ॥

गरैगी जीह जो कहौं और को हौं । जानकी जीवन जनम जनम जग, ज्यायो तिहारेहि कौर को हौं ॥ तीनि लोक तिहुँ काल न देखत, सुहृद रावरे जोर को हौं । तुम्हसों कपट करि कल्पकल्प कृमि, ह्वैहौं नरक घोर को हौं ॥ कहा भयो मन मिलि कलिकालहि, कियो भौं तुवा भोर को हौं । तुल-सिदास शीतल नित एहि बल, बडे ठिकाने ठौर को हौं ॥ २२९ ॥

अकारण को हित और को है । बिरद गरीब निवाज कौन को भौंह जासु जन जोहै ॥ छोटो बडो

१ घूमनेवाला ।

चहत सब स्वारथ, जो विरञ्चि बिरचो है। कोल कुटिल कपि भालु पालिबो, कौन कृपालहि सोहै॥ काको नाम अनख आलस कहे, अघ अवगुननि बिछोहै। कै तुलसी से सेवक संग्रह सठ सब दिन साईं द्रोहै॥ २३०॥

और मेरे कोहै काहि कहिहौं। रंक राज ज्यों मन को मनोरथ, केहि सुनाइ सुख लहिहौं॥ यम-यातना योनि सङ्कट सब, सहे दुसह अरु सहिहौं। मोको अगम सुगम तुमको प्रभु, तौ फल चार न चहिहौं॥ खेलन को खग मृग तरु किङ्कर, है रावर हौं रहिहौं। एहि नाते नरकहु सचु या बिनु, परमपदहु दुख दहिहौं॥ इतनी जिय लालसा दास के, कहत पानहीं गहि हौं। दीजे वचन कि हृदय आनिये, तुलसी पन निरबहिहौं॥ २३१॥

दीनबन्धु दूसरो कहँ पावों। को तुम बिनु पर पीर पाइहै, केहि दीनता सुनावों॥ प्रभु अकृपालु कृपालु अलायक, जहँजहँ चितहि डुलावों। इहै

समुझि सुनि रहौं मौनहीं, कहि भ्रम कहा गँवावौं ॥ गोपद बुडिबे योग करम करि, बातनि जलधि थहावौं । अति लालची काम किङ्कर मन, मुख रावरो कहावौं ॥ तुलसी प्रभु जिय की जानत सब, अपनो कछुक जनावौं । सोइ कीजे जेहि भांति छाड़ि छल, द्वार परो गुण गावौं ॥ २३२ ॥

मनोरथ मन को एकहि भांति । चाहत मुनि मन अगम सुकृत फल, मनसा अघ न अघाति ॥ करम भूमि कलि जनम कुसङ्गति, मति विमोह मद मांति । करत कुजोग कोटि क्यों पैयत, परमारथ पद शांति ॥ सेइ साधु गुरु सुनि पुराण श्रुति, बुझ्यो राग बजे तांति । तुलसी प्रभु सुभाउ सुरतरु से, ज्यों दर्पण मुख कांति ॥ २३३ ॥

जनम गयो बादिहि बर बीति । परमारथ पाले न पर्यो कछु, अनुदिन अधिक अनीति ॥ खेलत खात लड़कपन गो चलि, युवा युवति लियो जीति । रोग वियोग सोग श्रम संकुल, बड़ि वय वृथहि

प्रतीति ॥ राग रोष इरषा विमोह वश, रुची न साधु समीति। कहे न सुने गुण गण रघुपतिके, भइ न राम पद प्रीति ॥ हृदय दहत पछताय अनल इव, सुनत दुसह भव भीति। तुलसी प्रभु से होइ सो कीजिय, समुझि बिरद की रीति ॥ २३४ ॥

ऐसहि जन्म समूह सिराने। प्राणनाथ रघुनाथ से प्रभु तजि, सेवत चरण बिराने ॥ जे जड़ जीव कुटिल कायर खल, केवल कलिमल साने। सूखत बदन प्रशंसत तिन्ह कहँ, हरि ते अधिक करि माने ॥ सुख हित कोटि उपाय निरन्तर, करत न पाय पिराने। सदा मलीन पन्थ के जल ज्यों, कबहुँ न हृदय थिराने ॥ यह दीनता दूरि करिबे को, अमित यतन उर आने। तुलसी चित चिन्ता न मिटै बिनु, चिन्तामणि पहिचाने ॥ २३५ ॥

जौ जिय जानकी नाथ न जाने। तो सब करम धरम श्रम दायक, ऐसइ कहत सयाने ॥ जे सुर सिद्ध मुनीश योग विद, वेद पुराण बखाने। पूजा

लेत देत पलटे सुख, हानि लाभ अनुमाने ॥ जाको नाम धोखेहू सुमिरत, पातक पुञ्ज सिराने । विप्र बधिक गज गीध कोटि खल, कौन के पेट समाने ॥ मेरु से दोष दूरि करि जन के, रेणु से गुण उर आने । तुलसिदास तेहि सकल आस तजि, भजहि न अजहुँ अयाने ॥ २३६ ॥

काहे न रसना रामहिं गावहि । निशि दिन पर अपवाद वृथा कत, रटि रटि राग बढ़ावहि ॥ नर मुख सुन्दर मन्दिर पावन, बसि जनि ताहि लजावहि । शशि समीप रहि त्यागि सुधा कत, रविकर जल कहँ धावहि ॥ काम कथा कलि कैरव चन्दिनि, सुनत श्रवण दे भावहि । तिन्हहिं हटकि कहि हरि कल कीरति, करण कलङ्क नसावहि ॥ जातरूप मति जुगुति रुचिर मणि, रचि रचि हार बनावहि । शरण सुखद रविकुल सरोज रवि, राम नृपहि पहिरावहि ॥ वाद विवाद स्वाद तजि भजि हरि, सरस चरित चित लावहि । तुलसिदास भव तरहि तिहूँ पुर तूँ पुनीत यश पावहि ॥ २३७ ॥

अपनो हित रावरे सों जो सूझै । तौ जन तन पर अछत सीस सुधि, क्यों कबन्ध ज्यों जूझै ॥ निज अवगुण गुण राम रावरे, लखि सुनि मति मन रूझै । रहनि कहनि समुझनि तुलसी की, को कृपालु बिनु बूझै ॥ २३८ ॥

जाको हरि दृढ़ करि अङ्ग करयो । सोइ सुसील पुनीत वेद विद, विद्या गुणनि भरयो ॥ उतपति पाण्डु सुतन्ह की करनी, सुनि सतपन्थ डरयो । ते त्रयलोक पूज्य पावन यश, सुनि सुनि लोक तरयो ॥ जो निज धर्म वेद बोधित सो, करत न कछु बिसरयो । बिन अवगुण कृकलास कूप मझार कर गहि उधर्यो ॥ ब्रह्म विशिष ब्रह्माण्ड दहन छम, गर्भ न नृपति जर्यो । अजर अमर कुलिशहु नाहिन बध, सो पुनि फेन मर्यो ॥ विप्र अजामिल अरु सुरपति ते, कहा जो नहि बिगर्यो । उनको कियो सहाय बहुत उर, को सन्ताप हर्यो ॥ गणिका अरु कन्दरज ते जग महँ, अघ न करत

उबर्‌यो। तिनको चरित पवित्र मानि हरि, निज हृदि भवन धर्‌यो॥ केहि आचरण भलो मानै प्रभु, सो नहिं जानि पर्‌यो। तुलसिदास रघुनाथ कृपाको, जोवत पन्थ खर्‌यो॥ २३९॥

सोइ सुकृती शुचि सांचो जाहि राम तुम रीझे। गणिका गीध बधिक हरिपुर गये, लै करसी प्रयाग कब सीझे॥ कबहुँ न डग्यो निगम मगु ते पगु, नृग जग जान जिते दुख पाये। गज धौं कवन दिछित जेहि सुमिरत, लै सुनाभ[1] वाहन तजि धाये॥ सुर नर विप्र बिहाइ बड़े कुल, गोकुल जन्म गोप गृह लीन्हों। बावों दियो विभव कुरुपति को, भोजन जाइ विदुर घर कीन्हों॥ मानत भलेहि भलो भगतहि ते, कछुक रीति पारथहि जनाई। तुलसी सहज सनेह राम वश, और सबै जल की चिकनाई॥ २४०॥

तव तुम मोहू से सठनि हठि गति देते। कैसेहु नाम लेत कोउ पाँवर, सुनि सादर आगे ह्वै लेते।

१ सुदर्शन चक्र।

पाप खानि जिय जानि अजामिल, यमगण तमकि तये तेहि भेते । लिये छड़ाइ चले कर मीजत, पीसत दांत गये रिस रेते ॥ गौतम तिय गज गीध विटप कपि, हैं नाथहि नीके मालुम तेते । जिनके काजनि साधु सभा तजि, कृपासिन्धु तब तब उठि गेते ॥ अजहुँ अधिक आदर एहि द्वारे, पतित पुनीत होत नहिं केते । मेरे पासङ्गहु न पूजिहैं, ह्वै गये हैं होने खल जेते ॥ हौं अबलौं करतूति तिहारी, चितवत हुतो न रावरे चेते । अब तुलसी पूतरो बांधिहै, सहि न जात मोपै परिहास एते ॥ २४१ ॥

तुम सम दीनबन्धु न दीन कोउ,-मोसम सुनहु नृपति रघुराई । मोसम कुटिल मौलि मणि नहिं जग, तुम सम हरि न हरण कुटिलाई ॥ हौं मन वचन करम पातक रत, तुम कृपाल पतितन्ह गति दाई । हौं अनाथ तुम प्रभु अनाथहित, चित यह सुरति कबहुँ नहिं जाई ॥ हौं आरत आरति नाशन तुम, कीरति निगम पुराणनि गाई । हौं सभीत तुम

हरण सकल भय, कारण कवन कृपा विसराई॥ तुम सुखधाम राम श्रमभञ्जन, हौं अति दुखित त्रिविध श्रमपाई। यह जिय जानि दास तुलसी कहँ, राखहु शरण समुझि प्रभुताई॥ २४२॥

इहै जानि चरणनि चित लायो। नाहिंन नाथ अकारण को हित, तुम समान पुराण श्रुति गायो॥ जननि जनक सुत दार बन्धु जन, भये बहुत जहँ-जहँ हौं जायो। सब स्वारथ हित प्रीति कपट चित, काहू नहिं हरि भजन सिखायो॥ सुर मुनि मनुज दनुज अहि किन्नर, मैं तनु धरि शिर काहि न नायो। जरत फिरत त्रय ताप पाप वश, काहु न हरि करि कृपा जुड़ायो॥ यतन अनेक किये सुख कारण, हरिपद विमुख सदा दुख पायो। अब थाक्यो जलहीन नाव ज्यों, देखत विपति जाल जगछायो॥ मोकहुँ नाथ बूझिये यह गति, सुखनिधान निजपति विसरायो। अब तजि रोष करहु करुणा हरि, तुलसिदास शरणागत आयो॥ २४३॥

एहि ते मैं हरि ज्ञान गँवायो। परिहरि हृदय कमल रघुनाथहि, बाहिर फिरत विकल भय धायो॥ ज्यों कुरङ्ग निज अङ्ग रुचिर मद, अति मतिहीन मरम नहिं पायो। खोजत गिरि तरु लता भूमि बिल, परम सुगन्ध कहांते आयो॥ ज्यों सर विमल वारि परिपूरण, ऊपर कछु सिवार तृण छायो। जारत हियो ताहि तजि हौं सठ, चाहत एहि विधि तृषा बुझायो॥ व्यापत त्रिविध ताप तन दारुण, तापर दुसह दरिद्र सतायो। अपने धाम नाम सुरतरु तजि, विषय बबूर बाग मन लायो॥ तुम सम ज्ञान निधान मोहि सम, मूढ़ न आन पुराणनि गायो। तुलसिदास प्रभु यह विचारि जिय, कीजे नाथ उचित मन भायो॥ २४४॥

मोहि मूढ मन बहुत विगोयो। याके लिये सुनहु करुणामय, मैं जग जनमि जनमि दुख रोयो॥ शीतल मधुर पियूष सहज सुख, निकटहि रहत दूरि जनु खोयो। बहु भाँतिन्ह श्रम करत मोह वश,

वृथहि मन्द मति वारि बिलोयो ॥ करम कीच जिय जानि सानि चित, चाहत कुटिल मलहि मल धोयो । तृषावन्त सुरसरि बिहाय सठ, फिरिफिरि बिकल अकाश निचोयो ॥ तुलसिदास प्रभु कृपा करहु अब, मैं निज दोष कछू नहिं गोयो । डासतही गइ बीति निशा सब, कबहुँ न नाथ नींद भरि सोयो ॥ २४६ ॥

लोक वेदहू विदित बात सुनि समुझिय, मोहित विकल मति थिति न लहति । छोटे बड़े खोटे खरे मोटेऊ दूबर राम, रावरे निबाहे सबहीकी निबहति ॥ होते जो आपने वश रहतो एकही रस, दुनी न हरष शोक साँसति सहति । चहत जो जोईजोई लहत सो सोईसोई, केहू भांति काहू की न लालसा रहति ॥ करम सुभाव काल गुण दोष जीव जग, माया ते सभय भौंह चकित चहति । ईशनि दिगीशनि योगीशनि मुनीशनिहूँ, छोडति छुडाये ते गहाये ते गहति ॥ शतरञ्ज को सो साज काठ को

सबै समाज, महाराज बाजी रची प्रथम न हति। तुलसी प्रभुके हाथ हारिबो जीतिबो नाथ, बहु वेष बहु मुख शारदा कहति ॥ २४६ ॥

राम जपु जीह जानि प्रीति सों प्रतीति मानि, रामनाम जपे जैहै जियकी जरनि। रामनाम सों रहनि रामनाम की कहनि, कुटिल कलिमल शोक सङ्कट हरनि ॥ रामनाम को प्रभाउ पूजियत गण-राउ, कियो न दुराउ कही आपनी करनि। सेतु भव सागर को काशिहू सुगति हेतु, जपत सादर शम्भु सहित घरनि ॥ बाल्मीक व्याध है अगाध अपराध निधि, मरामरा जपे पूजे मुनि अमरनि। शोंक्यो विन्ध्य सोख्यो सिन्धु घटजहु नाम बल, हार्यो हिय खारो भयो भूसुर डरनि ॥ नाम महिमा अपार शेष शुक बारबार, मति अनुसार बुध वेदहू बरनि। नाम रति कामधेनु तुलसी को कामतरु, रामनाम है विमोह तिमिर तरनि ॥ २४७ ॥

पाहि पाहि राम पाहि रामभद्र रामचन्द्र, सुयश श्रवण सुनि आयो हौं शरण। दीनबन्धु दीनता

दरिद्र दाह दोष दुख, दारुण दुसह दर दुरित हरण ॥ जबजब जगजाल व्याकुल करम काल, सब खल भूप भये भूतल भरण । तबतब तनु धरि भूमि भार दूरि करि, थापे मुनि सुर साधु आश्रम वरण ॥ वेद लोक सब साखी काहू की रती न राखी, रावण की बन्दि लागे अमर मरण । ओक दै विशोक किये लोकपति लोकनाथ, राम राज भयो धर्म चारिहू चरण ॥ शिला गुह गीध कपि भील भालु राति-चर, ख्यालही कृपाल कीन्हे तारण तरण । पील उद्धरण शीलसिन्धु ढील देखियत, तुलसी पै चाहत गलानिही गरण ॥ २४८ ॥

भली भांति पहिचाने साहेब जहां लों जग, जूड़े होत थोडेही औ थोडेही गरम । प्रीति न नवीन नीति हीन रीति के मलीन, मायाधीन सब किये कालहू करम ॥ दानव दनुज बड़े महामूढ़ मूड़ चढ़े, जीते लोकनाथ नाथ बलनि भरम । रीझि रीझि दिये वर खीझिखीझि घाले घर, आपने

निवाजे की न काहू के शरम ॥ सेवा सावधान तूं सुजान समरथ सांचो, सब गुणधाम राम पावन परम । सुरुख सुमुख एकरस एकरूप तोहि, विदित विशेष घट घट के मरम ॥ तोसो नतपाल न कृपाल न कँगाल मोसो दया में बसत देव सकल धरम । राम कामतरु छांह चाहै रुचि मन मांह, तुलसी विकल बलि कलि कुधरम ॥ २४९ ॥

बारबार प्रभुहि पुकारिके खिझावतो न, जोपै मोको होतो कहूँ ठाकुर ठहर । आलसी अभागी मोसे तैं कृपाल पाले पोसे, राजा मेरे राजा राम अवध शहर ॥ सेये न दिगीश न दिनेश न गणेश गौरि, हित कै न माने विधि हरिहू न हर । राम न:महीं सों योग छेम नेम प्रेम पन, सुधा सो भरोसो एहु दूसरो जहर ॥ समाचार साथके अनाथ नाथ कासो कहों, नाथही के हाथ सब चोरऊ पहर । निज काज सुरकाज आरतके काज राम, बूझिये विलम्ब कहा कहूं न गहर ॥ रीति सुनि रावरी

प्रतीति प्रीति रावरे सों, डरत हौं देखि कलिकाल को कहर । कहेही बनैगी कै कहाये बलिजाउँ राम, तुलसी तूँ मेरो हारि हिये न हहर ॥ २५० ॥

रावरो सुभाव गुण शील महिमा प्रभाव, जान्यो हर हनुमान लषण भरत । जिन्हके हिये सुथल सम प्रेम सुरतरु, लसत सरस सुख फूलत फरत ॥ आप माने स्वामी कै सखा सुभाइ पाइ पति, ते सनेह सावधान रहत डरत । साहेब सेवक रीति प्रीति परमिति नीति, नेम को निबाह एक टेक न टरत ॥ शुक सनकादि प्रहलाद नारदादि कहैं, रामकी भगति बड़ि विरत निरत । जाने बिनु भगति न जानिबो तिहारे हाथ, समुझि सयाने नाथ पगनि परत ॥ छ मत विमत न पुराण मत एक पथ, नेति नेति नेति नित निगम करत । औरनि की कहा चली एकै बात भले भली, रामनाम लिये तुलसीहू से तरत ॥ २५१ ॥

बाप आपने करत मेरी घनी घटि गई । लालची लबार की सुधारिये बारक बलि, रावरी भलाई सब-

हीकी भली भई ॥ रोगवश तन कुमनोरथ मलिन मन, पर अपवाद मिथ्यावाद वानी हई । साधनकी ऐसी विधि साधन विना न सिधै, बिगरी बनावै कृपानिधि की कृपा नई ॥ पतित पावन हित आरत अनाथनि को, निराधार को अधार दीनबन्धु दई । इनमें एकौ न भयो बूझि न जूझो न जयो, ताहि ते त्रिताप तयो लुनियत बई ॥ स्वांग सूधो साधु को कुचाल कलि ते अधिक, परलोक फीकी मति लोक रङ्ग रई । बड़े कुसमाज राज आज लों जो पाये दिन, महाराज केहू भांति नाम ओट लई ॥ राम नाम को प्रताप जानियत नीके आप, मोको गति दूसरी न विधि निरमई । खीझिबे लायक करतब कोटि कोटि कटु, रीझिबे लायक तुलसीकी निलजई ॥ २८२ ॥

राम राखिये शरण राखि आये सब दिन । विदित त्रिलोक तिहुँकाल न दयालु दूजो, आरत प्रणतपाल को है प्रभु विन ॥ लाले पाले पोषे तोषे आलसी

अभागी अघी, नाथ पै अनाथनि सों भये न उरिन। स्वामी समरथ ऐसो हौं तिहारो जैसो तैसो, काल चाल हेरि होति हिये घनी घिन ॥ रीझि खीझि बिहँसि अनख क्योंहूं एकबार, तुलसी तूँ मेरो बलि कहियत किन। जाहि शूल निर्मूल होंहि सुख अनुकूल, महाराज राम रावरी सों तेहि छिन ॥ २५३ ॥

राम रावरो नाम मेरो मातु पितु है । सुजन सनेही गुरु साहेब सखा सुहृद, रामनाम प्रेम अविचल वितु है ॥ शतकोटि चरित अपार दधिनिधि मथि, लियो काढ़ि वामदेव नाम घृतु है । नामको भरोसो बल चारिहु फलु को फल, सुमिरिये छाड़ि छल भलो कृतु है ॥ स्वारथ साधक परमारथ दायक नाम, राम नाम सारिखो न और हितु है। तुलसी सुभाय कही सांचिये परैगी सही, सीतानाथ नाम चितहू को चितु है ॥ २५४ ॥

राम रावरो नाम साधु सुरतरु है। सुमिरे त्रिविध घाम हरत पूरत काम, सकल सुकृत सरसीरुह को

सरु है ॥ लाभहू को लाभ सुखहू को सुख सर्वश, पतित पावन डरहू को डरु है । नीचहू को ऊँचहू को रङ्कहू को रायहू को, सुलभ सुखद आपनो सो घरु है ॥ वेदहु पुराणहु पुरारिहु पुकारि कह्यो, नाम प्रेम चारि फलहूको फरु है । ऐसे राम नाम सों न प्रीति न प्रतीति मन, मेरे जान जानिबो सो नर खरु है ॥ नाम सो न मातु पितु मीत हित बन्धु गुरु, साहेब सुधी सुशील सुधाकरु है । नाम सों निबाह नेहु दीनको दयालु देहु, दास तुलसीको बलि बड़ो वरु है ॥ २५६ ॥

कहे विनु रह्यो न परत कहे राम रस न रहत । तुम से सुसाहेबकी ओट जन खोटो खरो, कालकी करमकी कुसाँसति सहत ॥ करत विचार सार पैयत न कहूँ कछु, सकल बड़ाई सब कहाँ ते लहत । नाथकी महिमा सुनि समुझि आपनी ओर, हेरि हारिके हहरि हृदय दहत ॥ सखा न सुसेवक न सुतिय सुप्रभु आपु, माय बापु तुहीं साँचो तुलसी

कहत । मेरी तो थोरीहै सुधरैगी विगरियो बलि, राम रावरीसों रही रावरी चहत ॥ २५६ ॥

दीनबन्धु दूरि किये दीन को न दूसरो शरण । आपको भले हैं सब आपने को कोऊ कहुं, सबको भलो है राम रावरे चरण ॥ पाहन पशू पतङ्ग कोल भील निशिचर, कांच ते कृपानिधान किये सुवरण । दण्डक पुहुमि पाँय परसि पुनीत भई, उकठे विटप लागे फूलन फरण ॥ पतित पावन नाम वामहू दाहिनो देव, दुनी न दुसह दुख दूषण दरण । शील-सिन्धु तोसों ऊँची नीचियो कहत शोभा, तोसों तुहीं तुलसी की आरति हरण ॥ २५७ ॥

जानि पहिचानि मैं विसारे हौं कृपानिधान, एते मान ढीठ हौं उलटि देत खोरि हौं । करत यतन जासों जोरिबे को योगी जन, तासों क्योंहू जुरी सो अभागो बैठो तोरि हौं ॥ मोसे दोष कोष कोऊ भूमिकोश दूसरो न, आपनी समुझि सूझि आयों टकटोरि हौं । गाड़ीके श्वानकी नाईं माया मोह की

बड़ाई, छिनहिं तजत छिन भजत बहोरि हौं ॥ बड़ो साईं द्रोही न बराबरी मेरीको कोउ, नाथ की सपथ किये कहत करोरि हौं। दूरि कीजे द्वार ते लबार लालची प्रपञ्ची, सुधा सो सलिल शूकरी ज्यों गहँडोरिहौं ॥ राखिये नीके सुधारि नीच कै डारिये मारि, दुहूँ ओर की बिचारि अब न निहोरिहौं। तुलसी कही है सांची रेख बार बार खाँची, ढील किये नाम महिमा की नाव बोरिहौं ॥ २५८ ॥

रावरी सुधारी जो बिगारी बिगरैगी मेरी, कहो बलि वेद की न लोक कहा कहैगो। प्रभुको उदास भाव जनको पाप प्रभाव, दुहूँ भांति दीनबन्धु दीन दुख दहैगो ॥ मैं तो दियों छाती पवि लियो कलिकाल दबि, सांसाति सहत पर वश को न सहैगो। बाँकी बिरदावली बनैगी पालेही कृपाल, अन्त मेरो हाल हेरियो न चित्त रहैगो ॥ करमी धरमी साधु सेवक विरत रत, आपनी भलाई भल कहाँ को न लहैगो। तेरे मुँह फेरे मोसे कायर कपूत कूर,

लटै लटपटैनि को कौन परिगहैगो ॥ काल पाइ फिरत दशा दयालु सबही की, तोहि विन मोहि कबहूं न कोऊ चहैगो। वचन करम हिये कहौं राम सौंह किये, तुलसी पै नाथके निबाहे निबहैगो ॥ २६१ ॥

साहेब उदास भये दास खास खीन होत, मेरी कहा चली है बजाइ जाइ रह्यो हौं। लोक में न ठाउँ परलोक को भरोसो कौन, हौं तो बलि जाउँ राम नामहीं ते लह्यो हौं॥ करम सुभाव काल काम कोह लोभ मोह, ग्राह अति गहनि गरीब गाढ़े गह्यो हौं। छोरिबे को महाराज बाँधिबे को कोटि भट, पाहि प्रभु पाहि तिहुँ ताप पाप दह्यो हौं॥ रीझि बूझि सबकी प्रतीति प्रीति एही द्वार, दूधको जरो पियत फूँकि फूँकि मह्यो हौं। रटत रटत लटो जाति पाँति भाँति घटो, जूठन को लालची चहौं न दूध नह्यो हौं॥ अनत चह्यो न भलो सुपथ सुचाल चल्यो, नीके जिय जानि इहाँ भलो अनचह्यो हौं। तुलसी

समुझि समझायो मन बार बार, आपने सो नाथहू सों कहि निरबह्यो हौं ॥ २६० ॥

मेरी न बनै बनाये मेरे कोटि कलप लौं, राम रावरे बनाये बनै पल पाउ मैं। निपट सयाने हौ कृपानिधान कहा कहौं, लिये बेर बदलि अमोल मणि आउ मैं ॥ मानस मलीन करतब कलिमल पीन, जीहहू न जप्यो नाम बक्यो आउबाउ मैं। कुपथ कुचाल चल्यो भयो न भूलिहू भलो, बाल दशाहू न खेल्यो खेलत सुदाउ मैं ॥ देखी देखा दम्भ ते कि सङ्ग ते भई भलाई, प्रगट जनाइ कियो दुरित दुराउ मैं। राग रोष दोष पोषे गो गण समेत मन, इनकी भगति कीन्ही इनहीं को भाउ मैं ॥ आगिली पाछिली अबहूँ की अनुमानहीं ते, बूझि-यत गति कछु कीन्हे तो न काउ मैं। जग कहै राम की प्रतीति प्रीति तुलसीहू, झूँठो सांचो आसरो साहेब रघुराउ मैं ॥ २६१ ॥

कह्यो न परत बिनु कहे न रह्यो परत, बडो सुख कहत बड़े सों बलि दीनता। प्रभु की बड़ाई बड़ी

आपनी छोटाई छोटी, प्रभु की पुनीतता आपनी पाप पीनता ॥ दुहूँ ओर समुझि सकुचि सहमत मन, सनमुख होत सुनि स्वामी समीचीनता । नाथ गुणगाथ गाये हाथ जोरि माथ नाये, नीचऊ नेवाजे प्रीति रीति की प्रवीनता ॥ एहि दरबार है गरब ते सरब हानि, लाभ योग छेम को गरीबी मिसकीनता । मोटो दसकन्ध सो न दूबरो विभीषण सो, बूझि परी रावरे की प्रेम पराधीनता ॥ इहां की सयानप अयानप सहस सम, प्रभु सतिभाय कहे मिटति मलीनता । गीध शिला शबरी की सुधि सब दिन किये, होयगी न सांई सों सनेह हित हीनता ॥ सकल कामना देत नाम तेरो कामतरू, सुमिरत होत कलिमल छल छीनता । करुणानिधान वरदान तुलसी चहत, सीतापति भक्ति सुरसरि मन मीनता ॥ २६२ ॥

नाथ नीके कै जानिबी ठीक जन जीय की।

---

१ यह शब्द अर्बीभाषाका है, अशक्त, अकिञ्चन।

रावरो भरोसो नाह कै सुप्रेम नेम रुचि,-रहनि महानि गति मति शुचि तीयकी ॥ दुकृत सुकृत वश सबही सों सङ्ग पर्‍यो, परखि पराई गति आपनेहूं कीय की। मेरे भले को गोसांई भलो पोच शोच कहा, किये कहों सौंह खांचि सांची सिय पीय की॥ ज्ञानहू गिरा के स्वामी बाहर अन्तरयामी, इहां क्यों दुरैगी बात मुख की औ हीयकी। तुलसी तिहारो तुम्हहीं पै तुलसी के हित, राखि के कहेते कछु ह्वैहों माखी घीय की ॥ २६३ ॥

मेरो कह्यो सुनि पुनि भावै तोहि करि सो। चारिहू बिलोचन बिलोक तूं तिलोक महँ, तेरो तिहुँकाल कहूं कोहै हितु हरि सो ॥ नयेनये नेह अनुभये देह गेह वश, परिखे प्रपञ्ची प्रेम परत उघारि सो। सुहृद समाज दगाबाजिही को सौदा सूत, जब जाको काज तब मिलै पांय परि सो ॥ बिबुध सयाने पहिचाने कैधों नाहिं नीके, देत एक गुण लेत कोटिगुण भरि सो। करम धरम श्रमफल

रघुवर विन, राख कोसो होम है ऊसर कोसो बरिसो॥ आदि अन्त बीच भलो भली करै सबही की, जाको यश लोक वेद रह्यो है बगरि सो। सीतापति सारि-खो न साहेब निधान शील, कैसे कल परै सठ बैठो सो बिसारि सो॥ जीव को जीवन प्राण प्राण को परम हित, प्रीतम पुनीत कृत नीच न निदरि सो। तुलसी तोको कृपालु कियो जो कोशलपालु, चित्रकूट को चरित चेतु चित करि सो॥ २६४॥

तन शुचि मन रुचि मुख कहों जन हौं सिय पीय को। केहि अभाग जानो नहीं, जो होइ नाथ सों नातो नेह न नीको॥ जल चाहत पावक लहों, विष होत अमी को। कलि कुचालि सन्तन्ह कही, सो सही मोहि कछु फहम न तरनि तमी को॥ जानि अन्ध अञ्जन कहै वन वाघिन घी को। सुनि उपचार विकार को, सुविचार करों जब तब बुधि वल हर ही को॥ प्रभु सों कहत सकुचात हौं, परौ

---

१ यह शब्द अर्बी भाषाका है, समझ-बुद्धि।

जानि फिरि फीको । निकट बोलि बलि बराजिये, परिहरै ख्याल अब तुलसिदास जड जीको ॥२६५॥

ज्योंज्यों निकट भयो चहों कृपाल त्योंत्यों दूरि पऱ्यो हौं । तुम चहुँयुग रस एक राम, हौंहूँ रावरो यद्यपि अघ अवगुणनि भऱ्यो हौं ॥ बीच पाइ नीच बीचही, छल छरनि छऱ्यो हौं । हौं सुवरण कुवरण कियो, नृप ते भिखारि करि सुमति ते कुमति कऱ्यो हौं ॥ अगणित गिरि कानन फिऱ्यो, बिनु आगि जऱ्यो हौं। चित्रकूट गये मैं लखी, कलि की कुचालि सब अब अपडरनि डऱ्यो हौं ॥ माथ नाइ नाथ सो कहौं, हाथ जोरि खऱ्यो हौं । चीन्हो चोर जिय मारहीं, तुलसी सो कथा सुनि प्रभु सों कहि निवऱ्यो हौं ॥ २६६ ॥

पन करिहौं हठि आजु ते राम द्वार पऱ्यो हौं । तूँ मेरो विन कहे न उठिहौं, जनम भरि प्रभु की सौंह करि निवऱ्यो हौं ॥ दै दै धका यमभट थके, टारे न टऱ्यो हौं । उदर दुसह सासति सही, बहुवार

जन्मि जग नरक निदरि निकस्यो हौं ॥ हौं माचल लै छाड़िहौं, जेहि लागि अस्यो हौं । तुम दयाल बनिहै दिये, बलि बिलँब न कीजे जात गलानि गस्यो हौं ॥ प्रगट कहत जो सकुचिये, अपराध भस्यो हौं । तौ मन में अपनाइये, तुलसिहि कृपा करि कलि बिलोकि हहस्यो हौं ॥ २६७ ॥

तुम अपनायो तब जानिहौं जब मन फिरि परिहै । जेहि सुभाय विषयनि लग्यो, तेहि सहज नाथ सो नेह छाड़ि छल करिहै ॥ सुत की प्रीति प्रतीति प्रीत की, नृप ज्यों डर डरिहै । अपनो सो स्वारथ स्वामी सो, बहु विधि चातक ज्यों एक टेक ते नहिं टरिहै ॥ हरषिहै न अति आदरे, निदरे न जरि मरिहै । हानि लाभ दुख सुख सबै, सम चित अनहित कलि कुचालि परिहरिहै ॥ प्रभु गुण सुनि मन हरषिहै, नीर नयननि ढरिहै । तुलसिदास भयो रामको, विश्वास प्रेम लखि आनद उमगि उर भरिहै ॥ २६८ ॥

राम कबहुँ प्रिय लागिहौ जैसे नीर मीन को । सुख जीवन ज्यौं जीवको, मणि ज्यों फणिको हित ज्यों धन लोभ लीन को ॥ ज्यों सुभाय प्रिय नागरी, नागर नवीन को । त्यों मेरे मन लालसा, करिये करुणाकर पावन प्रेम पीन को ॥ मनसा को दाता कहै, श्रुति प्रभु प्रवीन को । तुलसिदासको भावतो, बलिजाउँ दयानिधि दीजे दान दीन को ॥ २६९ ॥

कबहुँ कृपाकरि रघुवीर मोहू चितैहौ । भलो बुरो जन आपनो, जिय जानि दयानिधि अवगुण अमित बितैहौ ॥ जन्म जन्म हौं मन जित्यो, अब मोहि जितैहौ । हौं सनाथ ह्वैहौं सही, तुमहूं अनाथपति जो लघुताहि न भितैहौ ॥ विनय करौं अपभयहु ते, तुम परम हितैहौ । तुलसिदास कासों कहै, तुमहीं सब मेरे प्रभु गुरु मातु पितै हौ ॥ २७० ॥

जैसो हौं तैसो राम रावरो जन जनि परिहरिये । कृपासिन्धु कोशलधनी, शरणागत पालक ढरनि

आपनी ढरिये ॥ हौं तो बिगरायल औरको, बिगरो न बिगरिये। तुम सुधारि आये सदा, सबकी सबही बिधि अब मेरियो सुधरिये ॥ जग हँसिहै मेरे संग्रहे, कत एहि डर डरिये। कपि केवट कीन्हे सखा, जेहि शील सरल चित तेहि सुभाव अनुसरिये ॥ अपराधी तउ आपनो, तुलसी न बिसरिये। टूट्यो बाँह गरे परै फूटेहु बिलोचन पीर होत हित करिये ॥२७१॥

तुम जनि मन मैलो करो लोचन जनि फेरो। सुनहु राम बिन रावरे, लोकहू परलोकहू कोउ न कहूँ हित मेरो ॥ अगुण अलायक आलसी, जानि अधम अनेरो। स्वारथ के साथिन्ह तज्यो, तिजरा को सो टोटक औचट उलटि न फेरो ॥ भक्ति हीन वेद बाहिरो, लखि कलिमल घेरो। देवनिहूँ देव परिहर्‍यो, अन्याव न तिन्हको मैं अपराधी सब केरो ॥ नाम कि ओट पेट भरत हौं, पै कहावत चेरो। जग विदित बात है परी, समुझिये धौं अपने लोक कि वेद बड़ेरो ॥ ह्वैहै जब तब तुमहिं ते, तुलसी

को भलेरो । दिन दिनहुँ दिन बिगरिहै, बलिजाउँ बिलँब किये अपनाइये सबेरो ॥ २७२ ॥

तुम तजि हौं कासो कहौं और को हित मेरे । दीनबन्धु सेवक सखा, आरत अनाथ पर सहज छोह केहि केरे ॥ बहुत पतित भव निधि तरे, बिनु तरनी बिन बेरे । कृपा कोप सतिभायहू, धोखेहु तिरछेहु राम तिहारेहि हेरे ॥ जो चितवनि सौंधी लगै, चितइये सबेरे । तुलसिदास अपनाइये, कीजे न ढील अब जीवन अवधि नित नेरे ॥ २७३ ॥

जाउँ कहाँ ठौर है कहँ देव दुखित दीन को । को कृपाल स्वामि सारिखो, राखै शरणागत सब अँग बल विहीन को ॥ गनिहिं गुणिहिं साहेब चहै, सेवा समीचीन को । अधम अगुण आलसिन्ह को, पालिबो फबि आयो रघुनायक नवीन को ॥ मुख कहा कहों विदित है, जी की प्रभु प्रवीन को । तिहूँकाल तिहुँलोक में एक टेक रावरी तुलसी से मन मलीन को ॥ २७४ ॥

द्वारद्वार दीनता कही काढ़ि रद परि पाहूं। है दयाल दुनी दश दिशा, दुख दोष दलन छम कियो न सम्भाषण काहूं॥ तनुजा तजत कुटिल कीट ज्यों, तज्यो मातु पिताहूं। कहै को दोष काहि धौं, मेरोही अभाग मोसों सकुचत सब छुइ छाहूं॥ दुखित देखि सन्तनि कह्यो, सोचै जनि मन माहूं। तोसे पशु पाँवर पातकी, परिहरे न शरण गये रघु-वर ओर निबाहूं॥ तुलसी तिहारो भये सुखी भयो, प्रीति प्रतीति विनाहूं। नाम कि महिमा शील नाथ को, मेरो भलो विलोकि अब ते सकुचाहुँ सिहाहूं॥ २७८॥

कहा न कियों कहाँ न गयों शीश काहि न नायो। राम रावरो बिन भये जन, जनमिजनमि जग दुख दशहू दिशि पायो॥ आश विवश खास दास ह्वै, नीच प्रभुनि जनायो। हा हा करि दीनता कही, द्वार द्वार बारबार परी न छार मुहँ बायो॥ आसन वसन बिन बावरो, जहँतहँ उठि धायो।

मही मान प्रिय प्राण ते, तजि खोलि खलनि आगे खिन खिन पेट खलायो ॥ नाथ हाथ कछु नहिं लग्यो, लालच ललचायो । साँच कहीं नाँच कौन सो, जो न मोहि लोभ लघु निरज नचायो ॥ श्रवण नयन मग मन लगे, सब थल पतितायो । मूँड़ मारि हिय हारि के, हित हेरि फेरि अब चरण शरण तकि आयो ॥ दशरथ के समरथ तुहीं, त्रिभुवन यश गायो । तुलसी नत अवलोकिये, बलि बाँह बोल दै विरदावली बुलायो ॥ २७६ ॥

राम राय बिन रावरे मेरे को हित साँचो । स्वामि सहित सब सों कहों, सुनि गुनि विशेष कोउ रेख दूसरी खाँचो ॥ देह जीव योग के सखा, मृषा टाचन टाँचो । किये विचार सार कदली ज्यों, मणि कनक सङ्ग लघु लसत बीच बिच काँचो ॥ विनयपत्रिका दीन की, बाप आपही बाँचो । हिये हेरि तुलसी कही, सो सुभाय सही करि बहुरि पूँछिये पाँचो ॥ २७७ ॥

पवन सुवन रिपुदवन भरत लाल लषण दीन की। निजनिज अवसर सुधि किये, बलिजाउँ दास आस पूजिहै खास खीन की ॥ राजद्वार भली सब कहैं, साधु समीचीन की । सुकृत सुयश साहेब कृपा स्वारथ परमारथ गति भये गति विहीन की ॥ समय सँभारि सुधारिबी, तुलसी मलीन की । प्रीति रीति समुझाइबी, नतपाल कृपालहि परमिति पराधीन की ॥ २७८ ॥

मारुति मन रुचि भरतकी लखि लषण कही है। कलिकालहु नाथ नाम सों, प्रतीति प्रीति एक किङ्कर की निबही है ॥ सकल सभा सुनि लै उठी, जानि रीति रही है । कृपा गरीब निवज की, देखत गरीब को सहसा बांह गही है ॥ बिहँसि राम कह्यो सत्य है, सुधि मैं हूँ लही है । मुदित माथ नावत बनी, तुलसी अनाथ की परी रघुनाथ सही है॥२७९॥

इति श्रीविनयपत्रिका समाप्त ।

दोहा ।

संवत शशि दिन खण्ड भुवि, मास चैत अनुकूल ।
सित नौमी उल्लिखित शुभ, विनयपत्रिका मूल ॥
खोजि खोजि प्राचीन प्रति, मुद्रित लिखित अनेक ।
लिख्यो वीरकवि सोधि निज, मति बल बुद्धि विवेक ॥
भ्रमवश मुद्रण दोष ते, जो कहुँ भूल लखाय ।
मर्मी सज्जन करि कृपा, सादर लेहिं बनाय ॥

१२।८।१४

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-
गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेंकटेश्वर" छापाखाना,
कल्याण-मुंबई.

विज्ञप्ति ।

स्वदेशबन्धु-औषधालय

ज्ञानपूर-बनारसस्टेट ।

इस औषधालय में प्रत्येक औषधियां बहुतही शुद्धता पूर्वक और शास्त्र विधि के अनुसार तैयार की जाती हैं। शतशः गण्यमान्य पुरुषों ने उनसे लाभ उठाकर प्रशंसापत्र प्रदान किया है। यदि आप किसी रोग से पीडित हैं और दवा से यथार्थ लाभ न होता हो तो एकवार यहां से भी पत्र व्यवहार करें। आपके रोगानुकूल गुणकारी औषधि बतला दी जायगी और व्यवस्थापत्र मुफ्त दिया जायगा तथा यह भी साफ २ कह दिया जायगा कि रोग छूट सकता है अथवा नहीं। औषधालय में प्रत्येक रोगों की औषधियां तैयार रहती हैं, इसका उद्देश्य यथासाध्य देश बन्धुओं की सेवा करना है अतएव वे अल्प मूल्य परही दी जाती हैं और गरीबों की चिकित्सा विना मूल्यके की जाती है। अधिक जानना हो तो बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मिलेगा कार्ड भेजकर मगा लीजिये।

विनीत प्रार्थी-

पं० महावीरप्रसाद मालवीय वैद्य।

गोपालविलास।

यह पुस्तक दोहा चौपाई कवित्त सवैया आदिक अनेक छन्दोंकरके रचित है आद्योपान्त श्रीकृष्णजीके विचित्र चरित्र दर्साये हैं, इसमें उत्तमता यह है कि श्रुति स्मृति पुराण इतिहासादिकोंके अनुसार शान्त वात्सल्यादि रसप्रधान निवृत्तिमार्गही दिखाया है, जिसके श्रवणसे अन्य सम्प्रदायवालोंके चित्तमेंभी श्रीकृष्णचरणारविन्दोंमें प्रीति उत्पन्न होवे है, इतर कवियोंने तो प्रायः शास्त्रविरुद्ध मनमाने शृङ्गाररससे भगवच्चरित्रोंको दूषित किया है, जिनके श्रवणसे शास्त्रज्ञ वैष्णवोंके हृदयमेंभी ग्लानि उदय होती है और नाना मतोंवाले श्रीकृष्णचन्द्रजीमें पामरता आरोपण करे हैं. इन दोषोंका यहां निवारण किया है. कीमत १॥ रु.

अनुरागसागर.

(४६ ग्रन्थोंद्वारा संशोधित)

कबीरधर्मनगरके वंशप्रतापी हजूरी महंत श्रीयुगलदासजी प्रसिद्ध रसीदपुराशिवहरवाले भारतपथिक स्वामी युगुलानंद विहारीद्वारा ४६ ग्रंथोंद्वारा संगृहीत. पुस्तकका आकार गुटकाकार रखा है. पुस्तक पहिलेसे दुनी याने ४३२ पृष्ठकी हुई है तौभी दाम केवल १ रुपया रखा है.

अनेकसंग्रह।

ईश्वरने गानविद्यामें ऐसा जादू रक्खा है कि जिसके द्वारा इसका प्रभाव आबाल वृद्ध वनिता सभीके चित्तके ऊपर समान भावसे पड़ता है, रसिकोंको रसीले पद गानेका शौक है, भगवद्भक्त भक्तिके पद गाते हैं, प्रेमीजन प्रेमासंबंधी और कविलोग साहित्यविषयके गानको पसन्द करते हैं। सारांश यह है कि संसारमें रोना और गाना सभीको आता है। परन्तु–अबतक ऐसा अद्भुत संग्रह जगत्में कहीं नहीं छपा था कि जिसमें सब रुचिके मनुष्य अपने २ मानसिक भावोंके अनुकूल समस्त विषयोंको एकत्र पा सकें । परन्तु श्रीयुत पंडित रामलालजी महाशयने अनेकसंग्रह ग्रन्थको तयार करके उक्त अभावको मिटा दिया। इस ग्रंथने संसारमेंके साम्हने एक नवीन प्रकारके अचरजको उपस्थित कर दिया कि संसारमें कोईभी विषय ऐसा नहीं रह गया जिसके ऊपर सुन्दर सुपाठ्य और आवश्यक कविताका संग्रह इस ग्रन्थमें प्राप्त न हो; इसीसे इसके छपते रही इसकी सहस्रों प्रतियें हाथोंहाथ विक गईं और शेष ग्राहक हाथ मल २ के पछतातेही रह गये। उन्हीं ग्राहकोंके शौकके लिये अब पं० व्रजरत्नभट्टाचार्यसे नये आयोजनके साथ खुब बढ़वाके और शुद्ध कराके द्वितीय वार इस ग्रन्थको हमने मोटे २ अक्षरोंमें सुन्दर कागजके ऊपर छापके प्रसिद्ध किया है। प्रिय ग्राहकगण कमसे कम एक प्रति मंगानेके लिये आजही एक पत्र लिखिये, नहीं तो फिर पछताना पड़ेगा। मूल्य २ रु०

शुद्धाशुद्धपत्र ।

अशुद्ध.	शुद्ध.	पृष्ठ.	पंक्ति.
प्रथमराज	प्रमथराज	११	१४
विहङ्ग	विहङ्ग	२०	१६
वरुण	वरुणा	२६	७
नामामृत	नामामृतं	४६	११
मुक्ति	मुक्त	५०	७
अवनित	अवनिप	५२	७
दुप्रेक्ष्य	दुःप्रेक्ष्य	५४	१३
निर्माण	निर्मान	५४	१७
गर्भाभकादर्भ	गर्भार्भकादभ्र	५६	९
अविरल,	अविरल	५९	८
प्राय	प्राप्य	५९	१७
ज्ञात	ज्ञान	६२	६
वर रु	वर	६६	४
भू	भ्रू	६८	६
सागर	सार	७३	१०
बडी	बडो	७४	१७
भवज्जाल	भवजाल	७६	९
कमर	करम	७६	१३
संकोच	सँकोच	७७	१६
सुनु	सुनु सठ	८३	१
मगत	भगत	९३	८
कञ्जनाहि	कञ्चनाहिँ	९६	१

अशुद्ध.	शुद्ध.	पृष्ठ.	पंक्ति.
श्रीखंड	श्रिखंड	१०१	१४
जो ॥	॥ जो	१०३	१८
मग्न	भग्न	१०४	१६
कहते	कहते हैं	१०६	११
सेवाहि	सेवाहिँ	१०९	५
कहैं	कहँ	१११	१
तैं	तैं	११८	२
सतावई	सतावईं	११८	५
अजहू	अजहूँ	११८	११
बाँका	बाँको	१२०	३
हौ	हौँ	१२३	१७
गुसई	गुसाँई	१२८	१०
हरचौं	हारचौं	१२८	११
ख्यल	ख्याल	१२८	१८
सौ	सौँ	१३०	१
तू	तूँ	१३१	१०
नहीं	नाहिँ	१३९	१
कबहुँ	कबहूँ	१४४	१५
झूंठन	जूठन	१४५	३
सुहृत	सुहृद	१४५	१५
सपनेहु	सपनेहुँ	१४७	१०
घरो	घरो	१४७	१३
होई	होइ	१४८	८
तै	तैं	१४९	७

अशुद्ध.	शुद्ध.	पृष्ठ.	पंक्ति.
फरनी	फरनि	१५४	१
तहं	तहूँ	१५५	३
जांने	जाते	१५५	१३
जानतहुं	जानतहूँ	१५६	११
बटो	बटोरे	१५८	३
सिखावत	सिखावन	१५८	११
नं	न	१५९	२
समुझ्यो	समुझ्यो नहीँ, मन कहा	१५९	४
सांचों	साँचो	१५९	८
जासौं	जासौं	१५९	१६
बन्धो	बँधो	१५९	१६
सभीत	सभीत	१६०	६
निवाज्यों	निवाज्यो	१६१	६
कीजो	कीजे	१६३	११
मत	मन	१६४	१३
काय	काज	१६६	११
उघारचो	उघारचो	१६७	१५
कीजिय	कीजिये	१६८	९
खटाई	खटाइ	१७०	६
हख्यों	छुटक्यो	१७८	६
गङ्ग	गङ्ग जनक	१७९	८
के	कै	१७९	१०
साधु साधु	जाइ साधु	१८०	२
जतु	जन	१८०	१७

अशुद्ध.	शुद्ध.	पृष्ठ.	पंक्ति.
तरनिहुं	तरनिहूँ	१८१	१६
कुतह	कुतरु	१८२	७
रावरों	रावरो	१८२	१६
मानि	भानि	१८३	६
परो	फरो	१८४	१०
ह्रीं	हौं	१८४	१४
ह्वैहौ	ह्वैहौं	१८६	१२
भौं तुवा	भौंतुवा	१८६	१३
हरि के	हारि के	२०३	१६
प्रीत	मीत	२१२	१०
आसन	असन	२१६	१७
निवज्ज	निवाज	२१८	१२



मिया
मपदम

हेकलौकुंगे
रायणा:
मिस्वरणमौ
गहे

हा वहं कु
काम का

विचारेत मलं [illegible] चि
संत्यक्त वासनां [illegible] दो

[illegible] दश प्रकरणं

मे [illegible]

सर्व त्र जदि स्वा[illegible]
भांतु लिर्दते नैवेद[illegible]
मा[illegible]
वर्थ[illegible] पिता [illegible]
[illegible]
[illegible]